जैन साहित्य एवं मंदिर उपकरण

हमारे यहाँ सभी प्रकार का दिगंबर जैन एवं भारत के सभी प्रमुख धार्मिक संस्थानों का सत साहित्य एवं मदिर में उपयोग हेतु उपकरण और प्रभावना में बाटने योग्य सामग्री सीमित मूल्य पर उपलब्ध है !

शुध्द चांदी के उपकरण आर्डर पर निर्मित किये जातें है!

(पांडुशिला, सिंघासन ,छत्र ,चंवर प्रातिहार्य , जापमाला , मंगल कलश,पूजा बर्तन चंदोवा,तोरण,झारी)

नोट :- हमारे यहाँ घरो मे उपयोग हेतु , साधुओं के उपयोग हेतु, अनुष्ठानो मे उपयोग हेतु शुध्द देशी घी भी आर्डर पर उपलब्ध कराया जाता है !

Contact:-
Sourabh Sagar Indore
9993602663
7722983010
sourabhjn1989@gmail.com

जैन

जय जिनेन्द्र

गाय का शुद्ध देशी घी

शुद्धता पूर्वक बनाया गया देशी घी

साधु व्रती एवं धार्मिक अनुष्ठानो को ध्यान में
रख कर बनाया गया शुद्ध देशी घी

घी ऐसा के दिल जीत जाये !

अब 1kg की पैकिंग में भी उपलब्ध

संपर्क सूत्र

Contact For Order

Sourabh Sagar Indore

Call & Whatsapp:

9993602663,7722983010

All India Home Delivery

श्रमण संस्कृति सिद्धान्त प्रवेशिका

भाग प्रथम

- प्रकाशक -
श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान
वीरोदय नगर, सांगानेर, जयपुर (राज.)

तृतीय संस्करण : 2000
जनवरी, 2015
✿
(सर्वाधिकार सुरक्षित)
✿
आशीर्वाद
आचार्य श्री 108विद्यासागर जी महाराज
✿
प्रेरणा
मुनिपुंगव श्री 108सुधासागर जी महाराज
(ससंघ)
✿
कृति
श्रमण संस्कृति सिद्धान्त प्रवेशिका भाग-1
✿
सम्पादक
पं. रतन लाल बैनाड़ा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन
✿
मूल्य
12/- रुपये (पुनः प्रकाशन हेतु)
✿
प्राप्तिस्थान :
श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान
वीरोदय नगर, नशियाँ रोड
सांगानेर- 302 029 जयपुर (राज.)
फोन : 0141-2730552, 3941222
✿
मुद्रक :
महावीर प्रिन्टिंग
बी.2, बाईपास चौराहा, जयपुर
मो.: 9414073465

कहाँ / क्या ?

खण्ड-1

1.	दर्शन स्तुति	1
2.	णमोकार महामंत्र	2
3.	अंजनचोर	5
4.	चत्तारि दण्डक	6
5.	तीर्थंकर	7
6.	तीर्थंकर आदिनाथ	9
7.	जैन कुलाचार	11
8.	आचार्य शान्तिसागर	13
9.	जीव और अजीव	15
10.	इन्द्रियाँ	17
11.	सर्वज्ञदेव राम	19

खण्ड-1

1.	प्रार्थना	22
2.	पाप	23
3.	गति	25
4.	भगवान भरत एवं बाहुबलि	27
5.	कषाय	29
6.	प्रमुख जैनाचार्य	30
7.	हमारे जैन पर्व	32
8.	अष्ट मूलगुण	36
9.	चतुर्विध संघ	38
10.	हमारे दैनिक कर्त्तव्य	39
11.	जिनवाणी स्तुति	40

आभार

इस कृति में जिन मुनिराजों, त्यागी व्रतियों, मनीषियों एवं विद्वानों की रचनाओं को समावेशित किया गया है और जिन महत्त्वपूर्ण पुस्तकों, कृतियों, ग्रंथों से श्रमपूर्वक सामग्री का चयन प्रत्यक्षतः परोक्षतः किया गया है-उन सबके प्रति मैं अपने हृदय के गहनातिगहन तल से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

सम्पादक

पाठ-1 दर्शन स्तुति

प्रभु पतित पावन मैं अपावन, चरण आयो सरन जी।
यो विरद आप निहार स्वामी, मेट जामन मरन जी॥

तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकार जी।
या बुद्धिसेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्यो हितकार जी॥

भव-विकट-वन में कर्म बैरी, ज्ञान धन मेरो हर्यो।
तब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट गति धरतो फिर्यो॥

धन घड़ी यो धन दिवस यों ही, धन जनम मेरो भयो।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु जी को लख लयो॥

छवि वीतरागी नग्नमुद्रा, दृष्टि नाशा पे धरे।
वसु प्रातिहार्य अनन्त गुण-युत कोटि रवि छवि को हरै॥

मिट गयो तिमिर मिथ्यात्व मेरो, उदय रवि आतम भयो।
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लयो।।

मैं हाथ जोड़ नवाऊँ मस्तक, वीनऊँ तुम चरन जी।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहुँ तारन तरन जी॥

जाचूँ नहीं सुरवास पुनि नर, राज परिजन साथ जी।
'बुध' जांचहूँ तुमभक्ति भव-भव, दीजिए शिवनाथ जी॥

पाठ-2 णमोकार महामंत्र

णमो अरिहंताणं - लोक में सब अरिहंतों को नमस्कार हो।
णमो सिद्धाणं - लोक में सब सिद्धों को नमस्कार हो।
णमो आइरियाणं - लोक में सब आचार्यों को नमस्कार हो।
णमो उवज्झायाणं - लोक में सब उपाध्यायों को नमस्कार हो।
णमो लोएसव्वसाहूणं - लोक में सब साधुओं को नमस्कार हो।

मंत्र - जिसमें अनंत शक्ति और अनंत अर्थ विद्यमान रहते हैं तथा जिसके पाठ मात्र करने से कार्य की सिद्धि होती है, उसे मंत्र कहते हैं। णमोकार मंत्र में पाँच परमेष्ठी को नमस्कार किया गया है इसलिए इस मंत्र को णमोकार मंत्र या नमस्कार मंत्र भी कहते हैं।

परमेष्ठी - जो परम पद में स्थित होते हैं, उन्हें परमेष्ठी कहते हैं। परमेष्ठी पाँच होते हैं। 1. अरिहंत 2. सिद्ध 3. आचार्य 4. उपाध्याय 5. साधु ।

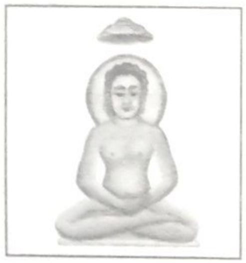

1. अरिहंत-जिन्होंने चार घातिया कर्मों को नष्ट कर दिया है, जो अठारह दोषों से रहित होते हैं, उन्हें अरिहंत परमेष्ठी कहते हैं ।

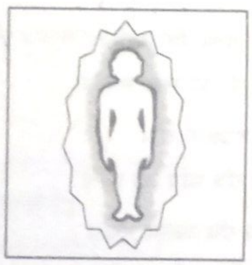

2. सिद्ध-जो अमूर्तिक, अष्ट कर्म रहित, सम्यक्त्वादि अष्ट गुणों से सहित होते हैं, उन्हें सिद्ध परमेष्ठी कहते हैं। ये लोक के अंत में विराजमान होते हैं।

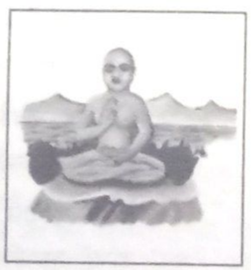

3. आचार्य-जो पंचाचारों का स्वयं आचरण करते हुये अन्य साधुओं से भी आचरण कराते हैं, संघ के प्रधान होते हैं तथा शिक्षा, दीक्षा एवं प्रायश्चित देते हैं, उन्हें आचार्य परमेष्ठी कहते हैं।

4. उपाध्याय-जो संघ में रहकर संघस्थ शिष्यों को शास्त्रों का अध्ययन कराते हैं, उन्हें उपाध्याय परमेष्ठी कहते हैं।

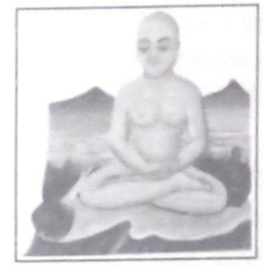

5. साधु -जो ज्ञान, ध्यान, तप में लीन रहते हैं एवं आरम्भ-परिग्रह से रहित होते हैं, उन्हें साधु परमेष्ठी कहते हैं।

णमोकार मंत्र का महत्त्व

एसो पंच णमोयारो, सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं होई मंगलं॥

शब्दार्थ - एसो = यह, **पंच** = पाँच, **णमोयारो** = नमस्कार, **सव्व पावप्पणासणो** = सभी पापों का नाश करने वाला है, **मंगलाणं** =मंगलों में, **च** = और, **सव्वेसिं** = सब, **पढमं** = पहला, **होई** = है, **मंगलं** = मंगल।

अर्थ - यह पंच नमस्कार मंत्र सब पापों को नष्ट करने वाला है और सब मंगलों में पहला मंगल है।

इस मंत्र को पंचपरमेष्ठीमंत्र, अनादिमूलमंत्र, अनादिनिधनमंत्र, महामंत्र, अपराजितमंत्र, नमस्कारमंत्र, मूलमंत्र, मंत्रराज आदि नामों से जाना जाता है।

पंच परमेष्ठियों में यद्यपि सिद्ध परमेष्ठी सर्वश्रेष्ठ हैं, परन्तु हम सबको कल्याण का मार्ग अरिहंत परमेष्ठी बताते हैं। अत: अरिहंत परमेष्ठी को सर्वप्रथम नमस्कार किया गया है।

इस मंत्र में 5 पद होते हैं। 35 अक्षर, 58 मात्राऐं, 35 स्वर और 30 व्यंजन होते हैं। इस मंत्र की रचना किसी ने नहीं की। यह तो अनादि काल से प्रवर्तमान अनादि निधन मंत्र है। इस मंत्र को ईसा की पहली शताब्दी में सर्वप्रथम आचार्य पुष्पदंत महाराज ने षट्खण्डागम ग्रन्थ के मंगलाचरण के रूप में प्राकृत भाषा में लिपिबद्ध किया था।

यह मंत्र कहीं भी पढ़ने योग्य है, परन्तु पवित्र स्थानों में ही उच्चारण करना चाहिए। अपवित्र स्थानों में मात्र मन में ही पढ़ना चाहिए।

णमोकार मंत्र से लाभ - मंत्र विविध शक्तियों का खजाना होता है, इसका मनोयोग से जाप करने पर सम्पूर्ण शक्तियाँ धीरे-धीरे प्रकट होने लगती हैं। यह मंत्र दुर्बल मन को सबल करता है, रोगी मन को स्वस्थ करता है, चित्त की अन्तर्मुखता को बढ़ाता है, कर्म बंधनों का नाश करता है। इस मंत्र के पढ़ने से समस्त रोगों से मुक्ति होती है, संकट और विघ्न दूर हो जाते हैं, सभी इच्छित सांसारिक सुखों की प्राप्ति होती है।

णमोकार मंत्र जाप की विधि - णमोकार मंत्र का जाप श्वासोच्छवास पूर्वक करना चाहिए। एक बार णमोकार मंत्र पढ़ने में 3 श्वासोच्छवास लगते हैं। 9 बार पढ़ने में 27 श्वासोच्छवास अर्थात् 2 मिनिट लगाने चाहिए।

णमोकार मंत्र की विशेषता-इसमें किसी व्यक्ति विशेष को नमस्कार नहीं किया गया है,अपितु उन सभी महान आत्माओं को स्मरण किया गया है, जिन्होंने परमेष्ठी पद प्राप्त कर लिया है। व्यक्ति विशेष की महिमा से सम्प्रदाय पनपते हैं जबकि गुणों की महिमा से धर्म की वृद्धि होती है। इस मंत्र की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें किसी से कुछ मांग नहीं की है। इसमें पूर्णत: नि:स्वार्थ भाव मे पंचपरमेष्ठी के प्रति भक्ति भाव प्रकट किया गया है। उसके बदले में कुछ भी नहीं चाहा गया है।

इस मंत्र के प्रभाव से कुत्ते ने देवपर्याय प्राप्त की, सप्तव्यसनी अंजनचोर सद्मार्ग में लग केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्ष गया। द्रौपदी का चीर बढ़ा और शील रक्षा हुई, सोमासती के हार का सर्प पुष्पमाला में परिवर्तित हो गया। बैल को अग्रिम पर्याय में मोक्ष की प्राप्ति हुई, एक ग्वाला चम्पानगरी में सुदर्शन सेठ हुआ, श्री राम ने जटायुपक्षी को मंत्र सुनाया जिसके प्रभाव से जटायु छठवें स्वर्ग में देव हुआ था, साथ ही इस मंत्र का अपमान करने से सुभौम चक्रवर्ती मरकर सातवें नरक में गया था।

अभ्यास प्रश्न

1. सही विकल्प चुनकर कोष्ठक में लिखिये।

(1) परमेष्ठी होते हैं।

(अ) 5 (ब) 6 (स) 9 (द) 24 ( )

(2) प्रथम परमेष्ठी हैं-

(अ) अरिहंत (ब) सिद्ध (स) आचार्य (द) साधु ( )

(3) सर्वप्रथम णमोकार मंत्र लिपिबद्ध किया था

(अ) आदिनाथ (ब) महावीर (स) पुष्पदन्त ( )

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :-

(1) इस मंत्र में ---------- को नमस्कार किया गया है।

(2) जो परमपद में स्थित होते हैं उन्हें ----- कहते हैं।

(3) इस मंत्र में ----- पद---- अक्षर --- मात्राएं हैं।

3. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

1. णमोकार मंत्र को किस-किस नाम से जाना जाता है ?
2. अरिहंत और सिद्ध परमेष्ठी में क्या अन्तर हैं ?
3. णमोकार मंत्र के स्मरण से क्या लाभ हैं?
4. सर्वप्रथम अरिहंत परमेष्ठी को नमस्कार क्यों किया गया है ?
5. साधु परमेष्ठी किसे कहते हैं ?

पाठ-3 अंजनचोर

काश्मीर देश के अन्तर्गत विजयपुर के राजा अरिमथन के ललितांग नाम का एक सुन्दर पुत्र हुआ। इकलौता बेटा होने से माता-पिता के अत्यधिक लाड़ प्यार स्नेह से वह विद्याध्ययन नहीं कर सका और दुर्व्यसनी बन गया। युवा होने पर प्रजा को अत्यधिक दु:ख देने लगा तब राजा ने उसे देश से निकाल दिया।

वह ललितांग चोर डाकुओं का सरदार बन गया और चोरी-लूटमार में पारंगत हो गया। वह अंजनगुटिका विद्या सिद्ध करके दूसरों से अदृश्य होकर मनमाने अत्याचार करने लगा, जिसके कारण वह ललितांग अंजनचोर के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

एकदिन राजगृह नगर में रात्रि के समय रानी के अलंकार कक्ष से राजघराने का बहुमूल्य रत्नों का हार चुराकर भागा, तब कोतवालों ने उसका पीछा किया। वह श्मशान में पहुँच गया। वहाँ पर वट वृक्ष में एक छींके पर एक सेठ बैठा था। वह बार-बार छींके पर चढ़ उतर रहा था। अंजनचोर ने पूछा- यह क्या कर रहे हो?

तब सेठ ने कहा- मुझे जिनदत्त सेठ ने आकाशगामिनी विद्या सिद्ध करने को दी है। किन्तु मुझे शंका है कि यदि विद्या सिद्ध नहीं हुई तो मैं नीचे शस्त्रों पर गिरकर मर जाऊंगा।

तब अंजनचोर ने कहा कि जिनदत्त सेठ मुनिभक्त हैं। उनके वचन कभी असत्य नहीं हो सकते, अत: तुम मुझे शीघ्र ही इसके सिद्ध करने का उपाय बता दो। तब अंजनचोर ने ऊपर चढ़कर ''आढ़म ताढ़म कछु न जाड़म सेठ वचन परमाड़म'' कहते हुए एक साथ सभी डोरियाँ काट दी और नीचे गिरते अंजनचोर को बीच में ही आकाशगामिनी विद्यादेवी ने विमान में बैठा लिया।

सिद्ध हुई विद्या ने उससे कहा कि मुझे आज्ञा दो। अञ्जन चोर ने कहा कि मुझे जिनदत्त सेठ के पास ले चलो। उस समय जिनदत्त सेठ सुदर्शन मेरु के चैत्यालय में स्थित थे। विद्या ने अञ्जन चोर को ले जाकर सेठ के सामने खड़ा कर दिया। अपना पिछला वृत्तान्त कह कर अञ्जन चोर ने सेठ से कहा कि आपके उपदेश से मुझे जिस प्रकार यह विद्या सिद्ध हुई है उसी प्रकार परलोक की सिद्धि के लिये भी आप मुझे उपदेश दीजिये। तदनन्तर चारण ऋद्धिधारी मुनिराज से दीक्षा लेकर उसने कैलाश पर्वत पर तप किया और केवलज्ञान प्राप्त कर वहीं से मोक्ष प्राप्त किया।

अभ्यास प्रश्न

1. ललितांग चोर का नाम अंजन चोर क्यों पड़ा?
2. अंजनचोर ने कौन सी विद्या सिद्ध की थी और उस विद्या का कार्य क्या था?
3. आकाश गामिनी विद्या सिद्ध करने के लिए सेठ बार-बार क्या कर रहा था?
4. अंजनचोर ने विद्या का उपयोग कहाँ किया था?
5. अंजनचोर ने किस मुनिराज से दीक्षा ग्रहण की थी?

पाठ-4 चत्तारि दण्डक

चत्तारि मंगलं	- चार मंगल हैं।	**चत्तारि लोगुत्तमा**	- लोक में चार उत्तम हैं।
अरिहंत मंगलं	- अरिहंत मंगल हैं।	**अरिहंत लोगुत्तमा**	- अरिहंत उत्तम हैं।
सिद्ध मंगलं	- सिद्ध मंगल हैं।	**सिद्ध लोगुत्तमा**	- सिद्ध उत्तम हैं।
साहू मंगलं	- साधु मंगल हैं।	**साहू लोगुत्तमा**	- साधु उत्तम हैं।

केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं - केवली भगवान द्वारा कहा गया धर्म मंगल है।

केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो - केवली भगवान द्वारा कहा गया धर्म लोक में उत्तम है।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि - मैं चार की शरण को प्राप्त होता हूँ।
अरिहंत सरणं पव्वज्जामि - मैं अरिहंत की शरण को प्राप्त होता हूँ।
सिद्ध सरणं पव्वज्जामि - मैं सिद्ध की शरण को प्राप्त होता हूँ।
साहू सरणं पव्वज्जामि - मैं साधु की शरण को प्राप्त होता हूँ।
केवलि पण्णत्तो धम्मो - मैं केवली भगवान् द्वारा कहे गये
सरणं पव्वज्जामि धर्म की शरण को प्राप्त होता हूँ।

शब्दार्थ-चत्तारि = चार, **पण्णत्तो** = कहा गया, **लोगुत्तमा** = लोक में उत्तम, **पव्वज्जामि** = प्राप्त होता हूँ।

लोक में अरिहंत, सिद्ध, साधु और केवली द्वारा कहा गया धर्म ये ही चारों मंगल, उत्तम एवं शरण हैं।

1. मंगल - जो मल अर्थात् पापों को गलावे और सच्चा सुख उत्पन्न करे, उसे मंगल कहते हैं।

2. उत्तम-लोक में जो सर्वश्रेष्ठ, सबसे महान हों, उसे उत्तम कहते हैं।

3. शरण-जिनका आश्रय लेने से आत्मा की पापों से रक्षा होती है, उसे शरण कहते हैं।

ये ही चार मंगल और उत्तम होने से इनकी शरण में जाना चाहिए क्योंकि इनका सहारा लेने से जीवों के पापों का नाश होता है अर्थात् दु:खों से छूटकर सच्चे सुख को प्राप्त होते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिये।

(1) मंगल ------------ होते हैं।
(2) केवली द्वारा बताया गया ------मंगल है।
(3) जो सर्वश्रेष्ठ हो उसे ------- कहते हैं।
(4) केवलि पण्णत्तं ----------------- सरणं पव्वज्जामि।

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिये।

(1) मंगल किसे कहते हैं?
(2) उत्तम किसे कहते हैं?
(3) लोक में मंगल, उत्तम और शरण कौन-कौन हैं ?
(4) अरिहंतादि की शरण में जाने से क्या लाभ है ?
(5) हमें किसकी शरण में जाना चाहिए?

१ १ १

पाठ-5 तीर्थंकर

पुत्र - पिता जी ! आज मन्दिर में सुना था कि रानी चेलना के कहने से राजा श्रेणिक ने यशोधर मुनि के गले से मरा हुआ सर्प निकाला था।

पिता - हाँ, बेटा! राजा श्रेणिक ने जैनधर्म की हँसी करने के लिए मुनि के गले में यह सर्प डाला था। बाद में राजा श्रेणिक जैन तीर्थंकर वर्धमान के शिष्य बने।

पुत्र - तीर्थंकर कौन कहलाते हैं ?

पिता - जो धर्म तीर्थ को चलाते हैं, उन्हें तीर्थंकर कहते हैं। वे वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी होते हैं।

पुत्र - पिता जी! क्या सभी भगवान तीर्थंकर होते हैं ?

पिता - नहीं बेटा, तीर्थंकर और भगवान में अन्तर है। तीर्थंकर तो 24 ही होते हैं, पर भगवान अनन्त होते हैं। तीर्थंकर के पञ्च कल्याणक होते हैं, पर भगवान के यह नियम नहीं है, तीर्थंकर के समवशरण की रचना होती है पर भगवान की नहीं होती तथा तीर्थंकर में वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी ये तीनों गुण होते हैं, पर भगवान में हितोपदेशी गुण होना आवश्यक नहीं है। जितने तीर्थंकर होते हैं, वे सभी भगवान होते हैं परन्तु सभी भगवान तीर्थंकर नहीं होते।

पुत्र - कल्याणक किसे कहते हैं?

पिता - इन्द्रादि के द्वारा गर्भ-जन्मादि के समय मनाये जाने वाले विशेष उत्सव को कल्याणक कहते हैं।

पुत्र - कल्याणक कौन-कौन से होते हैं?

पिता - गर्भकल्याणक, जन्मकल्याणक, तपकल्याणक, ज्ञानकल्याणक और मोक्षकल्याणक। इस प्रकार 5 कल्याणक होते हैं।

पुत्र - धर्म किसे कहते हैं ?

पिता - जिसके द्वारा प्राणी संसार के दु:खों से छूटकर उत्तम सुख को प्राप्त करता है, उसे धर्म कहते हैं।

पुत्र - पिताजी! हमें सुख और दु:ख तो भगवान ईश्वर की कृपा से मिलता है ना?

पिता - नहीं, बेटा! ईश्वर सुख-दु:ख नहीं देता। वह तो मात्र विश्व की सभी वस्तुओं को जानता है, उनमें अच्छा बुरा परिवर्तन नहीं कराता। सुख-दु:ख प्राणी को अपने-अपने कर्मों से मिलता है।

पुत्र - महावीर के अलावा और कौन-कौन तीर्थंकर हैं?

पिता - जैनधर्म में चौबीस तीर्थंकर होते हैं। प्रत्येक की पहचान उनके चिह्न द्वारा की जाती है।

पुत्र - कृपया उनके नाम बताइए?

पिता - सुनो।

1. ऋषभनाथ-बैल,	2. अजितनाथ-हाथी,	3. सम्भवनाथ-घोड़ा,
4. अभिनन्दननाथ-बंदर	5. सुमतिनाथ-चकवा,	6. पद्मप्रभ-श्वेतकमल,
7. सुपार्श्वनाथ-स्वस्तिक,	8. चन्द्रप्रभ-चन्द्रमा,	9. पुष्पदन्त-मगरमच्छ
10. शीतलनाथ-कल्पवृक्ष,	11. श्रेयांसनाथ-गैंडा,	12. वासुपूज्य-भैंसा,

13. विमलनाथ-शूकर,	14. अनन्तनाथ-सेही,	15. धर्मनाथ-बज्रदण्ड,
16. शांतिनाथ-हिरण,	17. कुन्थुनाथ-बकरा,	18. अरनाथ-मछली,
19. मल्लिनाथ-कलश,	20. मुनिसुव्रतनाथ-कछुआ,	21.नमिनाथ-लालकमल,
22. नेमिनाथ-शंख,	23. पार्श्वनाथ-सर्प	24. वर्द्धमान-सिंह

पुत्र - तीर्थंकर का चिह्न कहाँ दिखता है ?

पिता - यह चिह्न दाहिने पैर के अंगूठे में दिखाई देता है।

पुत्र - तीर्थंकर का चिह्न सर्वप्रथम कौन देखता है?

पिता - इसे सौधर्म इन्द्र सुमेरु पर्वत पर जन्माभिषेक के समय सर्वप्रथम देखता है।

पुत्र - तीर्थंकर के चिह्न क्यों रखा जाता है?

पिता - यदि चिह्न नहीं रखा जायेगा तो यह मालूम नहीं हो सकेगा कि किस तीर्थंकर की मूर्ति है। इस बात को जताने के लिए यह चिह्न रखा जाता है।

पुत्र - क्या बिना चिह्न की भी मूर्ति होती है?

पिता - हाँ, बेटा! तीर्थंकर के अलावा मुनि अवस्था की मूर्ति, सामान्य केवली की मूर्ति तथा सिद्ध परमेष्ठी की मूर्ति पर चिह्न नहीं होता है।

पुत्र - तीर्थंकरों के निर्वाण क्षेत्र बताइए।

पिता - 24 तीर्थंकरों में से तीर्थंकर ऋषभदेव कैलाश पर्वत से,तीर्थंकर वासुपूज्य चम्पापुरी से, तीर्थंकर नेमिनाथ गिरनार पर्वत से, तीर्थंकर महावीर पावापुरी से और शेष 20 तीर्थंकर श्री सम्मेद शिखर जी से मोक्ष पधारे हैं।

पुत्र - क्या अनेक नाम वाले भी कुछ तीर्थंकर हैं ?

पिता - हाँ, तीन तीर्थंकर अनेक नाम वाले हैं। ऋषभदेव को आदिनाथ तथा वृषभनाथ भी कहते हैं। इसी प्रकार पुष्पदन्त का दूसरा नाम सुविधिनाथ तथा वर्द्धमान के महावीर, वीर, अतिवीर और सन्मति नाम भी हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए ।

(क) ऋषभनाथ का -------------चिह्न है। (ख) पार्श्वनाथ -------------से मोक्ष गये ।

(ग) भगवान -----------------होते हैं। (घ) वर्द्धमान के ------------- नाम हैं।

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

1. तीर्थंकर के कितने कल्याणक होते हैं ?
2. चौबीस तीर्थंकरों के नाम व चिह्न बताइये ?
3. तीर्थंकर के चिह्न क्यों रखा जाता है ?
4. तीर्थंकर के निर्वाण क्षेत्र बताइये?
5. तीर्थंकर और भगवान में क्या अंतर है?

१ १ १

पाठ-6 तीर्थंकर आदिनाथ

एक बार वज्रजंघ राजा ने अपनी रानी श्रीमती के साथ वन में श्री दमधर और सागरसेन नामक ऋद्धिधारी मुनियों को नवधाभक्ति पूर्वक आहार दान दिया। वहीं मतिवर नामक मंत्री,आनन्द पुरोहित,धनमित्र सेठ,अकम्पन सेनापति के साथ नेवला, सिंह, वानर, सूकर ये चार तिर्यंच पशु भी भक्तिभाव पूर्वक आहारचर्या देख रहे थे। आहारचर्या के बाद मुनिराज ने सभी के लिये धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश सुनने के बाद राजा ने अपने एवं अन्य सभी के भव भवान्तर के विषय में पूछा, तब मुनिराज बोले कि-राजन्! इस भव से आठवें भव में आप प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ बनेंगे, रानी का जीव राजा श्रेयांस होगा और मंत्री, पुरोहित आदि आपके ही पुत्र होंगे। इतना सुनते ही सभी जीव अत्यन्त हर्षित हुए और अपना शेष जीवन धर्ममय व्यतीत करने लगे।

हुण्डावसर्पिणी के तृतीय काल के अंत में अयोध्या नगरी के राजा अंतिम कुलकर नाभिराय एवं उनकी पत्नी मरुदेवी के यहाँ चैत्र कृष्ण नवमी के दिन बालक आदिकुमार का जन्म हुआ। जन्म होते ही सौधर्म इन्द्र ने शिशु को सुमेरुपर्वत पर ले जाकर क्षीरसागर के जल से जन्माभिषेक एवं नाम-करण करके बड़े वैभव के साथ माता-पिता को सौंप दिया। बचपन में बालक आदिकुमार के साथ देवता बालक का रूप धारण कर खेलते रहते थे। उनकी मनोहर क्रीड़ायें सबके मन को लुभाने वाली एवं आकर्षक थीं। जब बालक राजकुमार युवा हुए तब उनके पिता नाभिराय ने उनका मंगल विवाह यशस्वती और सुनन्दा नामक दो कन्याओं के साथ कर दिया।

रानी यशस्वती ने भरत चक्रवर्ती आदि सौ पुत्रों सहित ब्राह्मी को एवं सुनन्दा ने बाहुबली और सुन्दरी को जन्म दिया, इस प्रकार एक सौ तीन पुत्र-पुत्रियों सहित ऋषभदेव ने अपना गृहस्थ जीवन व्यतीत किया।

ऋषभदेव ने अपनी पुत्रियों में से ब्राह्मी को दाहिने हाथ से ब्राह्मी लिपि विद्या एवं सुन्दरी को बांये हाथ से अंकविद्या का ज्ञान दिया तथा भरत, बाहुबली आदि एक सौ एक पुत्रों को राजनीति, युद्ध कला आदि की शिक्षा प्रदान की थी। वृषभदेव ने कल्पवृक्ष का अभाव होने से, विदेह क्षेत्र की व्यवस्था के अनुसार ही जनता को असि, मसि, कृषि, विद्या, वाणिज्य, शिल्प इन षट्कर्मों का उपदेश दिया।

एक दिन नीलांजना की नृत्य करते समय उसकी मृत्यु हो जाने पर उन्हें वैराग्य हो गया। तदनन्तर सम्पूर्ण कार्य भार अपने पुत्रों को सौंप कर सिद्धार्थ वन में जाकर चार हजार राजाओं के साथ, चैत्र कृष्णा नवमी के दिन दिगम्बरी जिन दीक्षा धारण कर ली। दिगम्बर जिन मुद्रा धारण करने के छह महिने बाद प्रथम आहार हेतु निकले परन्तु नवधाभक्ति को जानने वाले न होने से सात माह तक आहार नहीं मिला। बाद में राजा श्रेयांस ने आहार दिया था।

एक हजार वर्ष तक कठोर तपस्या करने के बाद एक दिन पुरिमताल वन में अशोक वृक्ष के नीचे फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त किया। देवों ने आकर कैवल्य प्राप्ति का उत्सव किया और सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से कुबेर ने समवसरण की रचना की। जिसमें वृषभसेनादि 84 गणधर, 84 हजार मुनिराज, 3 लाख 50 हजार ब्राह्मी-सुन्दरी आदि आर्यिकायें, 3 लाख श्रावक, 5 लाख श्राविकायें थीं। भगवान ने एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व तक दिव्यध्वनि के माध्यम से सप्ततत्त्व, नवपदार्थ, षट्द्रव्य आदि का यथार्थ वर्णन कर जिनधर्म के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया।

मोक्ष जाने के कुछ समय पूर्व विश्व में सुख शान्ति की स्थापना करते हुए दस हजार केवलज्ञानियों के साथ कैलाशपर्वत से माघ कृष्णा चतुर्दशी के दिन सम्पूर्ण कर्मों को नष्ट कर निर्वाण पद को प्राप्त कर लिया।

अभ्यास प्रश्न

1. बालक ऋषभदेव के माता-पिता का नाम बताइए।
2. राजा ऋषभदेव के कुल कितने पुत्र-पुत्रियाँ थीं?
3. राजा ऋषभदेव ने जनता को कौन से कर्म सिखाये थे?
4. भगवान ऋषभदेव का जन्म और निर्वाण कहाँ हुआ था?
5. दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों ने उपदेश के बाद क्या कहा था?
6. मुनि ऋषभदेव को सर्वप्रथम आहार किस राजा ने दिया था ?

९ ९ ९

पाठ-7 जैन कुलाचार

हमको बड़े भाग्य से उच्चकुल एवं जैनधर्म की प्राप्ति हुई है। अतः हमको अपना आचरण, खानपान आदि भी धर्म के अनुसार उचित बनाना चाहिए। जिसके लिए निम्न बातों पर ध्यान देना अत्यन्त आवश्यक है-

1. देवदर्शन : हमको प्रतिदिन प्रातःकाल श्री जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन अवश्य करने चाहिए। जिसकी विधि इस प्रकार है- प्रातः उठते ही णमोकार मंत्र का स्मरण करना चाहिए। उसके बाद मंजन, स्नान आदि क्रियाकर शुद्ध वस्त्र पहनकर हाथ में सामग्री लेकर, जीव जन्तुओं की रक्षा करते हुए जिनमंदिर जाना चाहिए। मन्दिर के बाहर जूते, चप्पल उतार कर पानी से हाथ पैर धोकर, भगवान की जय-जयकार करते हुए तीन बार निःसहि, निःसहि, निःसहि बोलना चाहिये। इसके बाद ओम् जय, जय, जय नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु बोलकर णमोकार मंत्र बोलना चाहिए, इसके बाद ढोक देनी चाहिए। इसके उपरांत णमोकार मंत्र का माहात्म्य (एसो पंच णमोयारो......) तथा 24 तीर्थंकरों के नाम बोलने चाहिए। यदि अर्घ याद हों तो अर्घ बोलकर सामग्री चढ़ाना श्रेष्ठ है। इसके बाद प्रभुपतित पावन, दर्शनं जपनी चाहिए एवं भगवान की तरफ पीठ न करते हुए मंदिर जी बाहर आना चाहिए।

नोट :- 1. मंदिर जी में प्रवेश करते समय चमड़े आदि की अशुद्ध वस्तुएँ नहीं पहननी चाहिए। 2. झूठे मुंह मंदिर जी में प्रवेश नहीं करना चाहिए। 3. हाथ-पैर धोकर ही मंदिर जी में प्रवेश करना चाहिए। 4. मंदिर जी में जब तक दर्शन करें तब तक भगवान की मूर्ति की ओर देखना चाहिए। अन्य ओर नजर नहीं करना चाहिए तथा किसी अन्य से कोई बात भी नहीं करनी चाहिए।

2. रात्रिभोजन त्याग

जीवों की रक्षा करना हमारा प्रमुख कर्तव्य है। दिन में सूर्य की किरणें जीवों को उत्पन्न नहीं होने देतीं। जैसे हम देखते हैं कि बारिश के दिनों में सूर्य अस्त होते ही बिजली के बल्ब पर कीड़े आने लगते हैं जबकि वे दिन में नहीं आते। इससे सिद्ध है कि दिन में जीवों की उत्पत्ति बहुत कम या नहीं होती। इसलिये हमको दिन में ही भोजन बनाना एवं करना चाहिए। रात्रि में भोजन करने से मांसभक्षण हो जाने का दोष लगता है। रात्रि में भोजन करके सो जाने पर पाचन क्रिया खराब हो जाती है, जिससे कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। रात्रि में भोजन करते समय सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों का अभाव रहता है और हमें पूर्ण रूप से विटामिन डी नहीं मिल पाता है। अतः भोजन दिन में ही करना चाहिये।

3. पानी छानकर पीना

पानी की एक बूंद में असंख्यात जीव होते हैं, ऐसा जैनाचार्यों ने बताया है। बिना छने पानी से उन जीवों का घात होता है और स्वास्थ्य भी बिगड़ता है। वैज्ञानिकों ने भी बिना छने पानी की एक बूंद में 36450 जीव बताये हैं। इसलिए सदा ही पानी छानकर पीना चाहिये।

मोटे कपड़े का दोहरा छन्ना होना चाहिए (जिससे सूर्य की रोशनी न दिखे)। छना हुआ पानी 48 मिनिट तक त्रस जीव रहित रहता है तदुपरांत उसमें त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं अतः उसे फिर से छानना चाहिये।

अभ्यास प्रश्न

प्रश्न 1 देवदर्शन करते समय मन्दिरजी में क्या बोलना चाहिए?

प्रश्न 2 मन्दिर जी में क्या-क्या कार्य नहीं करने चाहिए?

प्रश्न 3 रात्रि भोजन करने से क्या हानियाँ हैं?

प्रश्न 4 पानी की एक बूँद में कितने जीव होते हैं?

प्रश्न 5 हमे पानी छानकर क्यों पीना चाहिए? स्पष्ट करें।

ч ч ч

पाठ-8 आचार्य शान्तिसागर जी

जुलाई सन् 1872 में, दक्षिण भारत के बेलगाँव जिले के भोज ग्राम के अन्तर्गत येलगुल में भीमगौंड़ा पाटील के घर में एक पुत्र का जन्म हुआ। उसकी माता का नाम सत्यवती था। दिगम्बर जैनधर्म को मानने वाले होने से माता सत्यवती पुत्र को नित्य प्रति जैन मंदिर ले जाती थी और प्यार से उसको सत्यगौड़ा (सातगौड़ा) कहकर पुकारती थी। सत्यगौड़ा के दो बड़े भाई थे, एक छोटा भाई था और एक बहिन थी।

बालक सातगौड़ा बचपन से ही पढ़ाई में प्रथम स्थान पर रहे और खेलकूद में भी, कैसा भी खेल हो, उसमें प्रथम स्थान पर रहते थे। बालक सत्यगौड़ा ने कभी भी ऐसा कोई कार्य नहीं किया जिससे कभी डाँट या मार पड़ी हो। वह अपनी माता से नित्य प्रति तीर्थंकरों-महापुरुषों की कथाएँ सुनते थे। उनके घर में सदा दिगम्बर मुनियों के, त्यागी गणों के आहार हुआ करते थे तो सातगौड़ा उनके दर्शन करते, सेवा करते, उनकी भक्ति करते थे। उनसे अच्छी-अच्छी बातें सीखते थे और मुनियों को कमण्डलु हाथ में लेकर मन्दिर तक छोड़ने जाते थे। बालक सातगौड़ा जब बड़े हुये। तब उन्होंने माता-पिता से दीक्षा लेने की आज्ञा मांगी। पिता जी ने कहा कि हमारी समाधि के उपरांत ले लेना। बाद में सातगौड़ा ने अपने माता-पिता का विधि पूर्वक समाधिमरण कराया।

उनको बचपन से ही धार्मिक कार्यों में ही रुचि थी तथा उनके भाव मुनि बनने के होते थे। इसलिए बचपन से ही भोजन मौन पूर्वक करते थे। दो बार से ज्यादा कुछ भी नहीं खाते पीते थे। बाजार का कुछ भी नहीं खाते थे। यदि भोजन में नमक आदि नहीं है तो वे मांगते नहीं थे।

युवा सातगौड़ा नित्य प्रति व्यायाम करते थे। उनकी ताकत ऐसी थी कि उनसे कोई भी जीत नहीं सकते थे। अन्याय-अनीति से दूर रहते थे। कभी भी उन्होंने झूठ नहीं बोला।

उन्होंने साधुओं की एवं माता-पिता तथा असहाय लोगों की खूब सेवा की इस कारण कभी बीमार नहीं पड़े। उन्होंने लड़ना-झगड़ना तो सीखा ही नहीं था। कभी भी माता-पिता व बड़ों के आदेश को टालते नहीं थे। कोई भी कार्य करते तो माता-पिता से पूछकर करते थे।

सातगौड़ा पशु-पक्षी पर बहुत प्रेम रखते थे। उनके खेत में पक्षी या जानवर आ जाते तो वह भगाते नहीं थे। उनको देखते रहते थे और खुश होते थे। उन पक्षियों के लिए पानी भरकर रखते थे। आस-पास के खेत वाले पक्षियों को, पशुओं को भगाते थे तो इनके खेत में आ जाते थे फिर भी वह नाराज नहीं होते थे, लेकिन जब फसल कटती और अनाज घर आता तो अन्य लोगों से ज्यादा आता था।

इस प्रकार से उदासीन रहकर उन्होंने 43 वर्ष की उम्र में सन् 1915 में क्षुल्लक दीक्षा ली और उनका नाम "शांतिसागर" रखा गया। कुछ समय बाद उन्होंने गिरनार जी (गुजरात) में नेमिनाथ भगवान् के चरणों को स्पर्श कर "ऐलक दीक्षा" ले ली और मात्र लंगोट रखने का संकल्प कर लिया।

गिरनार से लौट कर आये तो यरनाल (दक्षिण भारत) में श्री आचार्य देवेन्द्र कीर्ति जी मुनिराज से दिगम्बर मुनिदीक्षा ग्रहण की।

आचार्य श्री शांतिसागर जी गुफाओं में बैठकर भगवान का खूब ध्यान करते थे। ध्यान करते समय उनके शरीर से सर्प लिपट जाता था। बिच्छु-छिपकली आदि शरीर पर चढ़ जाते तो भी वो ध्यान को नहीं छोड़ते थे। शेर-चीते आदि जानवर तो उनके पास आकर बैठ जाते थे फिर भी वो डरते नहीं थे। इस कारण लोग उन्हें "चारित्र चक्रवर्ती" भी कहते थे।

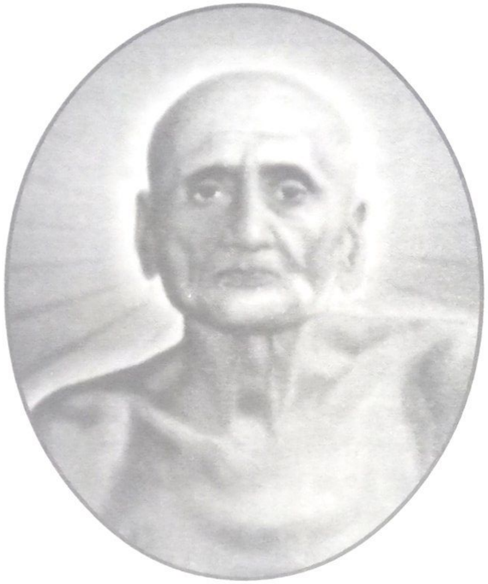

उन्होंने 35 वर्ष के मुनि जीवन में लगभग 27 वर्ष तो उपवास किये हैं। ऐसे महा तपस्वी आचार्य श्री शांतिसागर महाराज ने 36 दिन की सल्लेखना पूर्वक समाधिकरण किया। जैनधर्म की सबसे बड़ी प्रभावना करने वाले आचार्य शांतिसागर जी महाराज की जय हो।

अभ्यास प्रश्न

1. सत्यगौड़ा का मुनि अवस्था का नाम क्या था?
2. सत्यगौड़ा को डाँट-मार क्यों नहीं पड़ती थी?
3. सत्यगौड़ा माता से क्या सुनते थे?
4. सत्यगौड़ा के घर मुनि आहार लेने आते तब वो क्या करते थे?
5. सत्यगौड़ा के खेत में पशु-पक्षी के आ जाने पर वो क्या करते थे?
6. सत्यगौड़ा ने क्षुल्लक दीक्षा कब ली?
7. मुनि दीक्षा किन मुनिराज से ली?
8. शांतिसागर जी महाराज ने कितने वर्ष उपवास किए?

卐 卐 卐

पाठ-9 जीव और अजीव

जीव - जिसमें जानने (ज्ञान) और देखने (दर्शन) की शक्ति होती है,जो सुख-दुःख का अनुभव करता है, उसे जीव कहते हैं। जैसे-मनुष्य, हाथी, घोड़ा,खटमल, लट, वृक्ष आदि।

जीव के दो भेद होते हैं- (1) मुक्त जीव (2) संसारी जीव

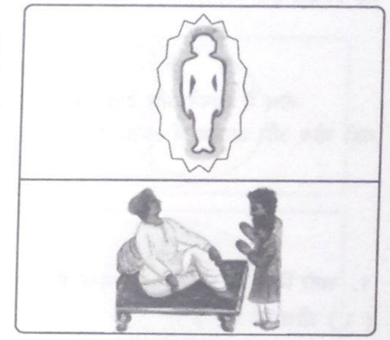

(1) **मुक्त जीव** - जिनके आठों कर्म नष्ट हो चुके हैं, जो इस संसार के जन्म-मरण के दुःखों से छूट गए हैं और लौटकर इस संसार में कभी वापस नहीं आयेंगे, उन्हें मुक्त जीव कहते हैं। जैसे -सिद्ध भगवान्।

(2) **संसारी जीव** -जो संसार में रहकर जन्म-मरण आदि के दुःखों को सहन करता है, जिसके आठों कर्म होते हैं, उसे संसारी जीव कहते हैं। जैसे-नारकी, देव, मनुष्य आदि।

मुक्त जीव और संसारी जीव में अन्तर

मुक्त जीव के कर्म, जन्म, मरण और दुःख नहीं होते किन्तु संसारी जीव के कर्म, जन्म, मरण और दुःख होते हैं। यही इन दोनों में अन्तर है।

संसारी जीव के दो भेद हैं-स्थावर जीव और त्रस जीव।

स्थावर जीव-एकेन्द्रिय जीव को स्थावर जीव कहते हैं। इन जीवों के केवल शरीर रूप एक स्पर्शन इन्द्रिय ही होती है।

स्थावर जीव के पाँच भेद हैं-1. पृथ्वीकायिक 2. जलकायिक 3. अग्निकायिक 4. वायुकायिक 5. वनस्पतिकायिक।

1. **पृथ्वीकायिक** -पृथ्वी ही जिनका शरीर है,वे पृथ्वीकायिक जीव कहलाते हैं। जैसे-मिट्टी, पाषाण, अभ्रक, सोना, पन्ना आदि खान से निकलने वाली वस्तुओं में पाये जाने वाले जीव।

2. **जलकायिक** -जल ही जिनका शरीर है, वे जलकायिक जीव कहलाते हैं। जैसे बर्फ, ओला, पानी आदि में पाये जाने वाले जीव।

3. **अग्निकायिक** -अग्नि ही जिनका शरीर है,वे अग्निकायिक जीव कहलाते हैं। जैसे-दीपक की लौ, अग्नि, बिजली आदि में पाये जाने वाले जीव।

4. **वायुकायिक** -वायु (हवा) ही जिनका शरीर है,वे वायुकायिक जीव कहलाते हैं। जैसे-हवा, आंधी आदि में पाये जाने वाले जीव।

5. वनस्पतिकायिक -वनस्पति ही जिनका शरीर है, वे वनस्पति कायिक जीव कहलाते हैं। जैसे-वृक्ष, लता, फल, फूल आदि में पाये जाने वाले जीव।

अजीव का लक्षण और दृष्टान्त

जिसमें जानने और देखने की शक्ति नहीं होती है तथा जो सुख और दुःख का अनुभव नहीं कर सकता, वह अजीव है।

जीव और अजीव में अन्तर

जीव में जानने और देखने की शक्ति होती है, किन्तु अजीव में जानने तथा देखने की शक्ति नहीं होती यही जीव और अजीव में अन्तर है।

अभ्यास प्रश्न

1. सही विकल्प चुनकर कोष्ठक में लिखिए।

(1) जीव के भेद हैं -

(क) 4 (ख) 3 (ग) 2 (घ) 10 ( )

(2) जीव है-

(क) शरीर (ख) टेबिल (ग) मोटर (घ) आत्मा ( )

(3) स्थावर के भेद होते हैं-

(क) अनन्त (ख) पाँच (ग) चार (घ) दो ( )

2. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(1) जीव के भेद-प्रभेद लिखिए ?

(2) स्थावर और त्रस में क्या अंतर है?

3. रिक्त स्थानों की पूर्ति करो।

1. संसार में .... वापस नहीं आयेंगे।
2. एकेन्द्रिय जीव को .... कहते हैं।
3. जीव के .... भेद होते हैं।

१ १ १

पाठ-10 इन्द्रियाँ

संसारी जीव की पहचान के चिह्न को इन्द्रिय कहते हैं अथवा संसारी जीव को ज्ञान कराने में शरीर का जो चिह्न सहायक होता है, उस चिह्न को इन्द्रिय कहते हैं।

स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं। स्पर्शन को त्वचा, रसना को जिह्वा (जीभ), घ्राण को नासिका (नाक), चक्षु को नेत्र (आँख) और कर्ण को श्रोत्र (कान) नाम से भी जाना जाता है।

स्पर्शन इन्द्रिय

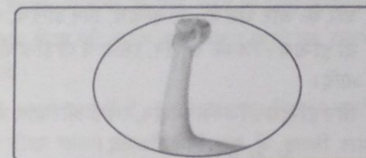

जिससे छू जाने (स्पर्श होने) पर हल्का, भारी, रूखा, चिकना, कड़ा, नरम, ठंडा और गरम जाना जाता है, उसे स्पर्शन इन्द्रिय कहते हैं। जैसे स्पर्श करने पर रुई-हल्की, लोहा-भारी, बालू-रुखी, घी-चिकना, पत्थर-कडा, रबर-नरम, बर्फ-ठण्डा और आग-गरम मालूम होती है।

रसना इन्द्रिय

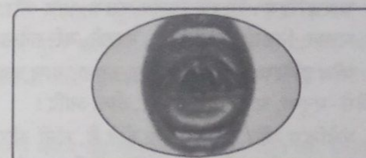

जिससे चखने पर खट्टा,मीठा,कडवा,कषायला, चरपरा आदि स्वादों को जाना जाता है, उसे रसना इन्द्रिय कहते हैं। जैसे-चखने पर नींबू खट्टा, गुलाब जामुन मीठा, नीम कड़वी, मिर्च चरपरी, आंवला कषायला मालूम होता है।

घ्राण इन्द्रिय

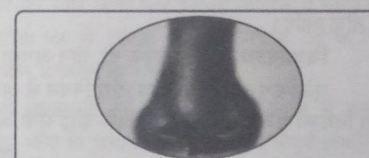

जिससे सूंघने पर सुगन्ध और दुर्गन्ध का ज्ञान होता है, उसे घ्राण इन्द्रिय कहते हैं। जैसे-फूल से सुगन्ध, सड़ी वस्तुओं से दुर्गन्ध आती है।

चक्षु इन्द्रिय

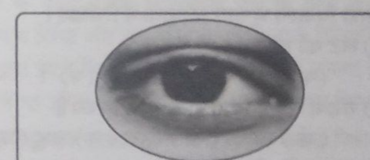

जिसके द्वारा काला,पीला,नीला,लाल,सफेद रंग और इन रंगों के मेल से बने तरह-तरह के रंगों का ज्ञान होता है, उसे चक्षु इन्द्रिय कहते हैं। जैसे-चाँदी सफेद, कोयला-काला, सोना-पीला, मोर पंख-नीला, गेरु-लाल मालूम होती है।

कर्ण इन्द्रिय

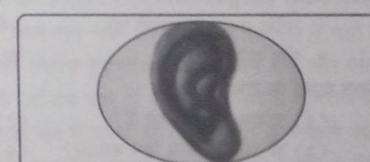

जिसके द्वारा आदमी,जानवर, बाजे आदि की आवाज सुनी जाती है, उसे कर्ण इन्द्रिय कहते हैं। जैसे-रेडियो, टी.वी., आदमी, जानवर की आवाज सुनना।

त्रसजीव-जिनके दो, तीन, चार अथवा पाँच इन्द्रियाँ होती हैं, उन्हें त्रसजीव कहते हैं।

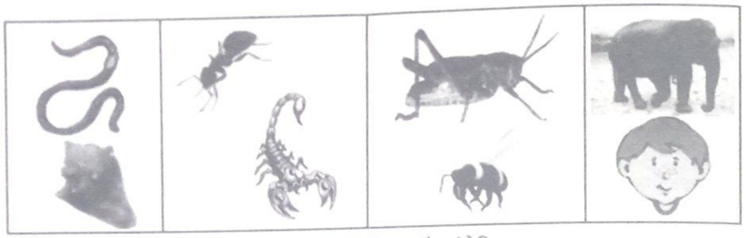

त्रस के चार भेद हैं- दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय और पंचेन्द्रिय।

दो इन्द्रिय : जिनके स्पर्शन, रसना ये दो इन्द्रियाँ हैं, वे दो इन्द्रिय जीव हैं। जैसे-लट, केंचुआ, जोंक, सीप, कौड़ी, शंख आदि।

तीन इन्द्रिय : जिनके स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रियाँ होती हैं, उन्हें तीन इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-चींटी, खटमल, बिच्छू, जूं, घुन, गिजाई आदि।

चार इन्द्रिय : जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण और चक्षु ये चार इन्द्रियाँ होती हैं, उन्हें चार इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-भौंरा, मच्छर, टिड्डी, मधुमक्खी, मक्खी, बर्र, ततैया आदि।

पाँच इन्द्रिय : जिनके स्पर्शन, रसना, घ्राण,चक्षु और कर्ण ये पाँच इन्द्रियाँ होती हैं, उन्हें पाँच इन्द्रिय जीव कहते हैं। जैसे-मनुष्य, सर्प, हाथी, घोड़ा, तोता आदि।

पंचेन्द्रिय जीव दो प्रकार के होते हैं, संज्ञी और असंज्ञी। जो शिक्षा और उपदेश ग्रहण करे, उसे संज्ञी कहते हैं। जैसे-मनुष्य, सर्प, हाथी, घोड़ा आदि। जो शिक्षा और उपदेश ग्रहण नहीं करे, उसे असंज्ञी कहते हैं, जैसे-जलसर्प, कोई-कोई तोता आदि।

विकलत्रय जीव -जिनके दो, तीन अथवा चार इन्द्रियाँ होती हैं, उन्हें विकलत्रय जीव कहते हैं।

एकेन्द्रिय और विकलत्रय जीव नियम से असैनी ही होते हैं। देव, नारकी तथा मनुष्य नियम से सैनी ही होते हैं, किन्तु तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय जीवों में कोई-कोई सैनी और कोई-कोई असैनी होते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. सही विकल्प चुनकर कोष्ठक में लिखिए।

(1) लट की इन्द्रियां होती हैं -

(क) 4 (ख) 3 (ग) 2 (घ) 1 ( )

(2) रेडियो सुनना किस इन्द्रिय का विषय है-

(क) स्पर्शन (ख) रसना (ग) चक्षु (घ) कर्ण ( )

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करो ।

1. अनेक प्रकार के स्वादों को .... से जाना जाता है।
2. श्रोत्र इन्द्रिय............................. के समान होती है। 3. त्रस के ....भेद हैं।

3. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(1) इन्द्रिय किसे कहते हैं? (2) इन्द्रिय कितने प्रकार की होती हैं?

(3) इन्द्रियों के अन्य नाम बताइए? (4) स्पर्शन इन्द्रिय किसे कहते हैं?

(5) रसना इन्द्रिय किसे कहते हैं?

९ ९ ९

पाठ-11 सर्वज्ञदेव राम

तीर्थंकर मुनिसुव्रत के तीर्थ में अयोध्या नगरी के राजा दशरथ और उनकी रानी कौशल्या से, फाल्गुन कृष्ण त्रयोदशी के दिन मघा नक्षत्र में रामचन्द्र जी का जन्म हुआ।

इनकी आयु 17000 वर्ष थी। शरीर की ऊँचाई 16 धनुष प्रमाण थी। दशरथ की अन्य रानियों में सुमित्रा का पुत्र लक्ष्मण, कैकेयी का पुत्र भरत तथा सुप्रभा का पुत्र शत्रुघ्न था।

एक बार राम ने वज्रावर्त धनुष चढ़ाकर सीता से विवाह किया। कैकेयी के द्वारा भरत के लिए राज्य मांगने पर राजा दशरथ ने राम के समक्ष अपनी चिंता व्यक्त की, तब राम पिता की आज्ञा का सम्मान करते हुए राजभवन को छोड़कर लक्ष्मण और सीता के साथ वन की ओर चले गये।

राम के वन गमन करते ही शोक संतप्त पिता दशरथ को, संसार स्वार्थी है, इस प्रकार का चिन्तन करते ही वैराग्य हो गया, तब सर्वभूतहित मुनिराज के पास उन्होंने मुनि दीक्षा धारण कर ली।

रामचन्द्र जी ने वहीं वन में साहसगति विद्याधर की माया से परेशान सुग्रीव को उसकी पत्नी सतारा प्राप्त करायी, वंशस्थल के वंशगिरि पर्वत पर देशभूषण और कुलभूषण मुनि का उपसर्ग दूर किया तथा दण्डक वन में कर्णरवा नदी के किनारे सुगुप्ति तथा गुप्ति नाम के दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों को आहार दान देकर पंचाश्चर्य प्राप्त किये।

एक दिन रावण ने अवलोकिनी विद्या के द्वारा सीता के हरण करने का वास्तविक उपाय जान कर सीता का हरण कर लिया और पुष्पक विमान में सीता को बैठाकर लंका की ओर चला गया। लंका के वन में पहुँचते ही रावण ने अपना असली रूप दिखाया, तब रावण को देखकर सीता भय से, लज्जा से तथा रामचन्द्र जी के विरह से उत्पन्न शोक में मूर्छित हो गयी और शीलरक्षा के लिए निर्जल उपवास ठान लिया।

कुछ समय बाद राम को हनुमान की क्षमता के बारे में जानकारी हुई। तब राम की आज्ञा से हनुमान आकाशमार्ग से लंका की ओर गए। लंका में पहुँचते ही सर्वप्रथम भौंरा के समान आकार बनाकर संपूर्ण लंकानगरी सहित रावण के महल की जानकारी ली, तदनन्तर नन्दनवन के प्रमद उद्यान में शिंशपा वृक्ष के ऊपर बैठकर हनुमान ने प्लवग नामक विद्या के द्वारा अपना बंदर जैसा रूप बना लिया और वन की रक्षा करने वाले सैनिकों को बेहोश कर विनीत भाव से सीता के सामने खड़े होकर श्रीराम द्वारा प्रदत्त चिह्न और राम के सन्देश को सुनाया। तब सीता आश्वस्त हो हर्ष को प्राप्त हुई। हनुमान के निवेदन करने पर सीता ने ग्यारहवें दिन आहार ग्रहण किया।

रामचन्द्र जी ने हनुमान एवं सुग्रीव की सहायता से 50 करोड़, 84 लाख भूमिगोचरी एवं 3 करोड़ विद्याधरों की सैन्य शक्ति के साथ लंका की ओर प्रस्थान किया। 20 योजन विशाल रणभूमि में राम और रावण में करीब साढ़े चार माह तक युद्ध होता रहा। अन्त में रावण द्वारा प्रहार किये गये चक्र को प्राप्त कर लक्ष्मण ने वही चक्र चलाकर रावण का वध कर दिया। इस प्रकार युद्ध में राम की विजय हुई। राम बलभद्र बन गये और लक्ष्मण नारायण बन गये। जिस दिन रावण का मरण हुआ उसी दिन के अन्तिम पहर में अनन्तवीर्य नामक मुनिराज अपने 56000 आकाशगामी उत्तम मुनिराजों के साथ कुसुमोद्यान नामक वन में पधारे और तभी रात्रि के पिछले पहर में अनन्तवीर्य मुनिराज को केवल ज्ञान प्रकट हो गया, तब वहीं इन्द्रजीत, मेघवाहन, भानुकर्ण आदि ने निर्ग्रन्थ मुनिदीक्षा एवं मन्दोदरी व चन्द्रनखा आदि ने आर्यिका व्रत धारण कर लिये।

राम, लक्ष्मण और सीता सहित 6 वर्ष तक लंका में ही रहे तत्पश्चात् सम्पूर्ण राज्य विभीषण को सौंपकर पुष्पक विमान से वे सब अयोध्या आ गये। माताओं से कुशल क्षेम पूछकर, प्रणामकर आशीर्वाद प्राप्त किया। राम के आते ही भरत ने मुनिदीक्षा धारण कर ली। राम का राज्याभिषेक हुआ। सीता के विषय में लोकापवाद होने से राम ने सीता का परित्याग करना राज्योचित समझा और सेनापति कृतान्तवक्र को आदेश देकर सीता को गर्भवती होते हुए भी तीर्थवंदना के बहाने सिंहनाद नामक भयंकर निर्जन वन में भिजवा दिया। तब सीता ने भाग्य पर विश्वास करके धैर्य धारण किया और कुछ दिन बाद ही अनंगलवण और मदनांकुश दो पुत्रों को जन्म दिया।

एक दिन सौधर्मइन्द्र की सभा में राम और लक्ष्मण के परस्पर प्रेम की चर्चा हुई। तब कौतूहलवश परीक्षा करने के लिए रत्नचूल और मृगचूल नामक दो देव अयोध्या के महल में आये। विक्रिया से अन्तःपुर में रुदन का शब्द व्याप्त किया और लक्ष्मण से, राम की मृत्यु हो गई है ऐसा कहा। राम की मृत्यु की सूचना सुन लक्ष्मण के "हाय! यह क्या हुआ", इतना कहते ही प्राण निकल गये। राम भी लक्ष्मण के मोह के वश छह माह तक पागलवत् चेष्टा करते रहे थे। उसी समय अनंगलवण और मदनांकुश ने भी मुनिदीक्षा ले ली। राम का मोह शिथिल होते ही, अपनी चेष्टा पर लज्जित हो, उन्होंने शोक त्याग कर लक्ष्मण से मोह त्याग कर दिया।

तदनन्तर राम ने संसार से विरक्त होकर अनंगलवण के पुत्र को राज्य देकर आकाशगामी सुव्रतमुनि के समीप मुनिदीक्षा ले ली। इनका नाम पद्ममुनि था। उसी समय शत्रुघ्न, विभीषण, सुग्रीव आदि 16000 राजाओं ने भी दीक्षा ले ली। पहले ही सीता ने आर्यिका दीक्षा ले ली थी और वह समाधिमरण से अच्युतस्वर्ग में स्वयंप्रभ नामक देव हुई। उस देव ने मोह के वशीभूत होकर राम को विचलित करने का प्रयास किया परन्तु पद्ममुनि ने 395 वर्ष बाद तप करके माघ शुक्ला द्वादशी की रात्रि में केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। भक्ति से प्रेरित हो सीता के जीव ने केवलज्ञानी राम की पूजा की और अनुरागभाव के प्रति क्षमायाचना की। इसके 600 वर्ष बाद, फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी के दिन प्रातः बेला में रामचन्द्र जी ने सम्पूर्ण कर्मों को नष्टकर तुंगीगिरि से निर्वाण पद प्राप्त किया।

अभ्यास प्रश्न

1. राजा दशरथ की कुल कितनी रानियाँ थीं? उनके नाम बताइए।
2. राम ने कौन-कौन से मुनियों का उपसर्ग दूर किया और आहार दान दिया था?
3. अनन्तवीर्य केवली से किस-किस ने रत्नत्रय को धारण किया था?
4. लक्ष्मण की मृत्यु किस कारण से हुई थी?
5. सीता का जीव किस कारण से देव बना,देवपर्याय का नाम बताइए?
6. राम के साथ कितने जीवों ने दीक्षाधारण की थी, रामचन्द्र की निर्वाण स्थली का नाम बताइए?

१ १ १

खण्ड – 2

पाठ-1 प्रार्थना

जीवन हम आदर्श बनायें, अनुशासन के नियम निभायें।
वीतराग जिनदेव भजेंगे, जिनवाणी अनुशरण करेंगे।
परम दिगम्बर मुनि पूजेंगे, उन पर श्रद्धा भक्ति बढ़ायें।। 1 ।।

सदा बड़ों की विनय करेंगे, छोटों के प्रति प्रेम रखेंगे।
सबसे मिलकर नेक बनेंगे, शक्ति एकता की दिखलायें ।।2 ।।

गुरु उपकार नहीं भूलेंगे, गुरु संकेत से शिक्षा लेंगे।
विनय नम्रता नहीं भूलेंगे, धीरज समता को अपनायें ।।3 ।।

रात्रि भोजन नहीं करेंगे, छान के पानी सदा पीयेंगे।
प्रभु के दर्शन नित्य करेंगे, इनके ही गुणगान को गायें ।।4 ।।

कभी किसी से नहीं लड़ेंगे, प्रेमभाव हम सदा रखेंगे।
दुःखियों पर हम दया करेंगे, उनकी सेवा कर सुख पायें ।। 5 ।।

चुगली भी हम नहीं करेंगे, बिना दिये कुछ चीज न लेंगे।
खोटी संगत सदा तजेंगे,सप्त व्यसन को दूर भगायें ।। 6 ।।

पाठ-2 पाप

परिभाषा :- खोटे भाव/विचार या खोटे कार्य करने को पाप कहते हैं अथवा जिस कार्य के करने से इस लोक में व परलोक में अनेक प्रकार के दुःखों को सहन करना पड़ता है और अपयश होता है, उसे पाप कहते हैं। पाप पाँच होते हैं- 1. हिंसा, 2. झूठ, 3. चोरी, 4. कुशील, 5. परिग्रह

1. हिंसा पाप

प्रमादवश किसी जीव को मारना, सताना, उसका दिल दुःखाना आदि को हिंसा कहते हैं। जैसे किसी पक्षी/जानवर को पिंजड़े या कमरे में बन्द कर उसकी स्वतंत्रता छीनना या भूखा-प्यासा रखना, सताना या दुःख देना। इस पाप को करने वाले हिंसक व क्रूर कहलाते हैं।

हिंसा के दो भेद हैं- (1) द्रव्यहिंसा (2) भावहिंसा

(1) **द्रव्यहिंसा**-कषाय के वश होकर किसी जीव के प्राणों का घात करना या पीड़ा देना द्रव्य हिंसा है। द्रव्यहिंसा चार प्रकार की होती है -

(1) आरम्भी हिंसा (2) उद्योगी हिंसा (3) विरोधी हिंसा (4) संकल्पी हिंसा

1. **आरम्भी हिंसा**-घर-गृहस्थी के कार्यों आदि में जो हिंसा होती है, उसे आरम्भी हिंसा कहते हैं। जैसे- खाना बनाना, कपड़े धोना आदि में होने वाली हिंसा।

2. **उद्योगी हिंसा**- व्यापार में जो हिंसा होती है, उसे उद्योगी हिंसा कहते हैं।

3. **विरोधी हिंसा**-देश, जाति, धर्म, समाज पर कोई द्रोह कर रहा हो तो उसके विरोध में जो हिंसा होती है, उसे विरोधी हिंसा कहते हैं। जैसे-अपने राज्य पर हमला करने वाले से युद्ध करना।

4. **संकल्पी हिंसा**-मन में संकल्प करके हिंसा में प्रवृत्ति करने को संकल्पी हिंसा कहते है। जैसे -शिकार खेलना, दवाई से खटमल मारना आदि।

(2) **भाव हिंसा**-आत्मा में रागद्वेष की उत्पत्ति होना, भाव हिंसा है।

हिंसा का फल- भाव हिंसा के कारण तंदुल मच्छ भी सप्तम् नरक गया है। हिंसा करने वालों को मिलने वाले दुष्परिणामों की अनेक कथाएँ प्रथमानुयोग के पुराणों में प्राप्त होती हैं। जिनका स्वाध्याय हमें करना चाहिए।

2. झूठ पाप

प्रमादवश जिस बात या जिस चीज को जैसा देखा या सुना हो वैसा न कहना झूठ है तथा जिन वचनों से धर्म-धर्मात्मा या किसी भी प्राणी का घात हो जावे, ऐसे सत्य वचन भी झूठ कहलाते हैं। इस पाप को करने वाले लोग झूठे, दगाबाज कहलाते हैं।

झूठ बोलने का फल-सत्यघोष ने झूठ बोला था, जिससे यहाँ अपमान को सहन किया और अब नरकों के दुःखों को सहन कर रहा है।

3. चोरी पाप

प्रमादवश बिना दिये किसी की गिरी, पड़ी, रखी या भूली हुई वस्तु को ग्रहण करना अथवा उठाकर किसी को दे देना चोरी है। इस पाप को करने वाले चोर कहलाते हैं।

चोरी का फल- चोरी करने वाले को तो अनेक प्रकार के दण्ड भोगने पड़ते हैं और कभी किसी को फांसी भी हो जाती है एवं परलोक में नरकगति के दुःखों को सहन करना पड़ता है।

4. कुशील पाप

परायी स्त्री या पर पुरुष के साथ रमण करने को कुशील कहते हैं। इस पाप को करने वाले व्यभिचारी, बदमाश कहलाते हैं और लोक में बुरी नजर से देखे जाते हैं।

कुशील पाप का फल- परस्त्री सेवन करने वालों को नरकादि के दुःखों को सहन करना पड़ता है।

5. परिग्रह पाप

जमीन, मकान, धन, धान्य, गाय, बैल आदि से मोह रखना। इन संसारी चीजों को इकट्ठा करने में लालसा रखना परिग्रह है। इस पाप को करने वाले लोभी, बहुधंधी, कंजूस कहलाते हैं।

परिग्रह पाप का फल- बहुत परिग्रह जब नष्ट होता है तो मनुष्य आकुल-व्याकुल हो जाता है एवं जब सरकार की ओर से छापे पड़ते हैं तो धन भी चला जाता है तथा बदनामी भी होती है। बहुत परिग्रह से नरक आयु का बंध भी होता है।

पाप से हानि

पाप को सेवन करने वाला पापी कहलाता है। लोक व समाज में बुरी दृष्टि से देखा जाता है। कल्याण के मूल कारण अणुव्रत उसके नहीं हो पाते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. सही विकल्प चुनकर कोष्ठक में लिखिए।

(1) व्यापार में जो हिंसा होती हैं, उसे कहते हैं-

(क) आरम्भी (ख) उद्योगी (ग) विरोधी (घ) संकल्पी ( )

(2) बहुत परिग्रह का फल है -

(क) नरकायु (ख) देवायु (ग) मनुष्यायु (घ) तिर्यंचायु ( )

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति करो ।

1. कुशील पाप को करने से ....बुरी नजर से देखे जाते हैं।
2. सत्यघोष ने .... पाप किया था।
3. पाप करने से .... नहीं हो पाते हैं।

3. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(1) पाप किसे कहते हैं ?

(2) पाप कितने हैं? नाम बताइये।

(3) द्रव्य हिंसा और भावहिंसा में क्या अन्तर है ?

(4) झूठ बोलने वाले को क्या कहते हैं ?

१ १ १

पाठ-3 गति

गति का लक्षण व भेद

गति नामकर्म के उदय से प्राप्त होने वाली पर्याय को गति कहते हैं। नरकगति, तिर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति ये चार गतियाँ हैं।

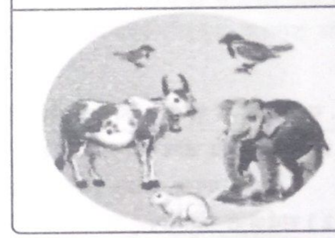

नरकगति

नरकगति नामकर्म के उदय से नरक में जन्म होना, नरकगति कहलाती है। इससे प्राणी को नारकी का शरीर धारण करना पड़ता है। जब मनुष्य या पशु मरकर नरक में जन्म लेता है। तब उसे नरकगति का होना कहते हैं। इन नरकों में जीव को दिन-रात असह्य दुःख भोगना पड़ता है। बहुत आरम्भ करने और बहुत परिग्रह रखने से नरकों में जन्म होता है। नीचे पाताल लोक में सात नरक हैं। घम्मा, वंशा, मेघा, अंजना, अरिष्टा, मघवा और माघवी।

तिर्यंचगति

तिर्यंचगति नामकर्म के उदय से तिर्यंचों में जन्म होना, तिर्यंचगति कहलाती है। इससे प्राणी को घोड़ा, गाय, हाथी, विकलत्रय और स्थावर की पर्यायें प्राप्त होती हैं। जब कोई जीव मरकर इन तिर्यंचों में जन्म लेता है, तब उसे तिर्यंचगति का होना कहते हैं। मायाचारी आदि करने से तिर्यञ्चों में जन्म होता है।

मनुष्यगति

मनुष्यगति नामकर्म के उदय से मनुष्यों में जन्म होना मनुष्यगति कहलाती है। इससे प्राणी को मनुष्य का शरीर धारण करना पड़ता है। जब कोई प्राणी मरकर मनुष्यों में जन्म लेता है, तब उसे मनुष्यगति का होना कहते हैं। थोड़ा आरम्भ और थोड़ा परिग्रह रखने से मनुष्यगति प्राप्त होती है।

देवगति

देवगति नामकर्म के उदय से देवों में जन्म होना देवगति कहलाती है। इससे प्राणी को देव का शरीर धारण करना पड़ता है। इनका वैक्रियिक शरीर होता है। जब मनुष्य या पशु मरकर देवों में जन्म लेता है, तब उसे देवगति का होना कहते हैं। संयमासंयम स्वभाव की कोमलता, बालतप और धर्म सेवन आदि से देवगति प्राप्त होती है। इससे जीव को देव की पर्याय प्राप्त होती है।

बिना गति का जीव

सिद्ध या मुक्त जीव किसी भी गति के जीव नहीं हैं, क्योंकि गति की प्राप्ति कर्म के ही निमित्त से होती है और मुक्तजीव के कर्म नहीं होते हैं।

गति की अपेक्षा इन्द्रियाँ

नारकी, देव और मनुष्य पंचेन्द्रिय ही होते हैं। तिर्यंचों के यथायोग्य 1,2,3,4 और 5 इन्द्रियाँ होती हैं।

गतियों में आवागमन

नरक गति से मरकर देवगति में नहीं जाते। देव गति से मरकर नरकगति में नहीं जाते। नरक से मरकर नरक में और देव से मरकर देव में भी उत्पन्न नहीं होते। तिर्यंच व मनुष्य मरकर चारों गति में जा सकते हैं।

सबसे अच्छी गति

सबसे अच्छी गति 'मनुष्यगति' है क्योंकि ध्यान, महाव्रत पालन और मोक्ष मनुष्यगति से ही हो सकते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. सही विकल्प चुनकर कोष्ठक में लिखिए ?

(1) विकलत्रय जीव इस गति में होते हैं।

(क) मनुष्य (ख) देव (ग) नरक (घ) तिर्यंच ( )

(2) सर्वश्रेष्ठ गति है।

(क) देव (ख) तिर्यंच (ग) नरक (घ) मनुष्य ( )

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

(1) गतियाँ .... होती हैं।

(2) मनुष्य मरकर चारों गतियों में .... हैं।

(3) सबसे अच्छी गति .... है।

3. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(1) गति किसे कहते है?

(2) गतियाँ कितनी हैं? परिभाषा सहित भेद लिखो।

(3) सबसे अच्छी गति कौन है और क्यों?

(4) नरक गति कैसे प्राप्त होती है?

(5) कौन जीव मरकर कहाँ पैदा नहीं होता?

१ १ १

पाठ-4 भगवान भरत और बाहुबली

राजा आदिनाथ के भरत और बाहुबली सहित 101 पुत्र और ब्राह्मी एवं सुन्दरी दो पुत्रियाँ थीं। इन दोनों पुत्रियों ने आर्यिका पद को धारण किया था। राजा आदिनाथ ने दीक्षा से पूर्व भरत को अयोध्या का एवं बाहुबली को पोदनपुर का राजा बनाया था।

एक दिन भरतचक्रवर्ती छह खण्ड की दिग्विजय कर लौट रहे थे, तभी उनका चक्ररत्न अयोध्या के बाहर ही रुक गया। मंत्रियों ने कारण बताते हुए कहा कि आपके भाई आपके आधीन नहीं हैं। तत्पश्चात् भरतचक्रवर्ती ने अपने सभी भाईयों के पास दूत भेज दिये। समस्त 99 भाईयों ने भगवान ऋषभदेव के पास जाकर जिनदीक्षा धारण कर ली। परन्तु बाहुबली ने उनकी आधीनता स्वीकार नहीं की। तब दोनों तरफ से युद्ध की घोषणा हो गई। उसी समय मन्त्रियों ने सोचा कि ये दोनों ही चरमशरीरी हैं, इनका तो कुछ नहीं बिगड़ेगा, व्यर्थ ही सेना का नाश हो जायेगा, अत: भरत और बाहुबली के बीच में तीन प्रकार के युद्ध निश्चित किये गए। दृष्टियुद्ध, जलयुद्ध और मल्लयुद्ध।

भरत के शरीर की ऊँचाई 500 धनुष प्रमाण और बाहुबली के शरीर की ऊँचाई 525 धनुष थी। अत: भरत दृष्टियुद्ध और जलयुद्ध में हार गये। इसी प्रकार मल्लयुद्ध में भी बाहुबली ने भरत को कन्धे पर उठाकर फिर जमीन पर पुन: उतार दिया।

तीनों युद्धों में हार होने से क्रोधित भरत ने बिना विचारे ही बाहुबली पर चक्र चला दिया। किन्तु चक्ररत्न अपने गोत्रज बन्धुओं का घात नहीं करता इसलिए चक्र बाहुबली कामदेव की प्रदक्षिणा देकर लौट गया।

भरत के इस कृत्य को देखकर बाहुबली को दु:ख हुआ और संसार के विषय में चिन्तन करते ही वैराग्य हो गया। उन्होंने भरत की अनुनय-विनय करने पर भी पोदनपुर का राज्य त्यागकर, कैलाश पर्वत पर जा जिनदीक्षा धारण कर ली। बाहुबली एक वर्ष का योग लेकर ध्यान में खड़े रहे। सर्पों ने उनके चरणों का आश्रय लेकर वामी बना ली, लतायें योगीराज के ऊपर चढ़ गई,चिड़ियों ने घोंसले बना लिए। ऐसी कठोर तपस्या के बाद भी उन्हें केवलज्ञान नहीं हो पा रहा था। एक दिन भरत ने जाकर बाहुबली को नमस्कार कर उनकी पूजा की, तत्क्षण ही उनका विकल्प समाप्त हो गया और कुछ ही समय बाद उन्होंने केवलज्ञान प्राप्त कर लिया। देवों ने गन्धकुटी की रचना की और कुछ समय के बाद भगवान बाहुबली सम्पूर्ण कर्मों को नष्ट करके मोक्ष चले गये।

भरत चक्रवर्ती ने पोदनपुर में भगवान बाहुबली की 500 धनुष प्रमाण की प्रतिमा बनवाई थी। इसी प्रकार कर्नाटक प्रान्त के श्रवणबेलगोला में आज से 1000 वर्ष पूर्व श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती के आचार्यत्व में राजा चामुण्डराय ने 57 फुट ऊँची अतिशयकारी मनोज्ञ प्रतिमा की प्रतिष्ठा करायी, जो गोम्मटेश बाहुबली के नाम से प्रसिद्ध है।

भरत चक्रवर्ती ने भी बाद में वैराग्य होने पर, मुनि दीक्षा धारण कर समस्त कर्मों का नाश कर मोक्ष प्राप्त किया।

अभ्यास प्रश्न

1. भरत चक्रवर्ती का चक्ररत्न अयोध्या के बाहर क्यों रुक गया था?
2. भरत और बाहुबली ने कितने प्रकार के युद्ध लड़े थे?
3. भगवान भरत और बाहुबली के शरीर की ऊँचाई कितनी थी?
4. भगवान बाहुबली को वैराग्य किस कारण से हुआ?
5. गोम्मटेश बाहुबली के स्थापनकर्ता एवं प्राचीनता के विषय में संक्षेप में बताइए।
6. भगवान ऋषभदेव ने भरत और बाहुबली को कहाँ-कहाँ का राज्य दिया था?

प प प

पाठ-5 कषाय

कषाय का लक्षण व भेद

जो आत्मा को कषता, दु:ख देता या पराधीन करता है, उसे कषाय कहते हैं अथवा जो सम्यक्त्व और चारित्र गुण को नहीं होने देता, उसे कषाय कहते हैं। कषाय के चार भेद होते हैं। 1.क्रोध 2.मान 3.माया 4.लोभ

1. क्रोध कषाय

गुस्सा करने को क्रोध कहते हैं। जैसे-एक कमजोर विद्यार्थी ने एक होशियार विद्यार्थी से कोई पाठ पूछा, इतने में ही वह गुस्से में आ गया, तो उसके क्रोध कषाय हुई।

2. मान कषाय

अहंकार,घमण्ड (अभिमान) को मान कहते हैं अथवा जाति आदि आठ मदों से दूसरे के प्रति नमने की प्रवृत्ति न होना मान कषाय है। जैसे-एक विद्यार्थी अपने धन, ज्ञान और रूप का घमण्ड करता है तो उसके मान कषाय हुई।

3. माया कषाय

छल-कपट करने को माया कहते हैं। जैसे-कोई खिलाड़ी विद्यार्थी सदा खेलता रहता है किन्तु गुरु के आने पर उन्हें धोखा देने को पुस्तक पढ़ने लगता है तो उसके माया कषाय हुई।

4. लोभ कषाय

लालच या तृष्णा को लोभ कषाय कहते हैं। जैसे-एक छात्र बिना मतलब बहुत सी वस्तुएँ इकट्ठी करता है तो उसके लोभ कषाय हुई।

किस कषाय की कहाँ प्राथमिकता

नरक गति में उत्पन्न जीवों के प्रथम समय में क्रोध का बहुल्य, मनुष्य गति में मान का बहुल्य, तिर्यंचगति में माया का बहुल्य और देवगति में लोभ का बहुल्य नियम से होता है।

कषाय से हानि

कषाय से आत्मा का पतन, कर्म का बन्ध, पापों में प्रवृत्ति, अपयश और दु:ख होता है। ये सभी कषायें दु:ख देने वाली हैं, हमारे पास चारों ही कषायें हैं इसलिए हमें इन कषायों को त्यागकर अथवा कम कर अच्छे मार्ग में लगना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

1. खाली स्थान भरिए-

(1) जो ....को कषता है, उसे कषाय कहते हैं।

(2) सभी कषायें .... देने वाली हैं। (3) छल-कपट करने को........... कषाय कहते हैं।

2. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

(1) लालच को क्या कहते हैं? (2) कषायें कितनी होती हैं?

(3) गुस्सा करने को क्या कहते हैं? (4) घमण्ड करने को क्या कहते हैं?

(5) हमारे पास अभी कितनी कषायें हैं?

प प प

पाठ-6 प्रमुख जैनाचार्य

1. आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी

आचार्य कुन्दकुन्द आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व इस भारतभूमि पर आध्यात्मिक जगत के सर्वोपरि आचार्य हुए हैं। आपके महान आध्यात्मिक चिन्तन से सम्पूर्ण भारतीय मनीषा प्रभावित हुई है और उसने एक अद्‌भुत मोड़ लिया है, यही कारण है कि आपके परवर्ती सभी आचार्यों ने अपने को आपकी परम्परा का आचार्य मानकर अपना गौरव माना है।

पूर्वभव-आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी के विषय में एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि दक्षिण देश के कुरुमलई ग्राम में करमण्डु नामक सेठ के यहाँ मणिरत्न नाम का एक ग्वाला रहता था। जिसे दावानल से जलते हुए जंगल में कुछ शास्त्र सुरक्षित मिले। वह ग्वाला उन्हें अपने घर ले आया और उच्च स्थान पर रख उनकी पूजा आराधना करने लगा। कुछ दिन बाद ग्वाले ने उन ग्रन्थों को मुनि श्री के लिये भेंट कर दिया। इसी पावन शास्त्रदान के प्रभाव से वह ग्वाला उपरोक्त सेठ के घर में कुन्दकुन्द नामक पुत्र हुआ।

जन्मस्थान-आपका जन्म आन्ध्रप्रदेश के अनन्तपुर जिले में गुण्टुकल स्टेशन से लगभग चार मील दूर कोण्डकुन्दु (कुन्दकुन्दपुरम्) अपर नाम कुरूमलई में माघ शुक्ला पंचमी ईस्वी पूर्व 108 में हुआ था। जिनशासन की प्रभावना एवं आध्यात्मिक क्रान्ति की जन्मघूंटी पीकर, उसे साकार करने के लिये 11 वर्ष की अल्पायु में ही आपने मुनिव्रत अंगीकार कर लिये। आपका मुनिदीक्षा नाम पद्मनन्दि था। बोधपाहुड ग्रन्थ के अनुसार आप आचार्य भद्रबाहु के शिष्य थे।

आयु-आपने ग्यारह वर्ष की अल्पायु में मुनि दीक्षा ले ली थी, 33 वर्ष तक मुनिपद पर रहे, तदन्तर 44 वर्ष की आयु में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुये, 52 वर्ष 10 माह 15 दिन तक आचार्यपद पर विराजमान रहे। इस प्रकार आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने 95 वर्ष 10 माह 15 दिन की दीर्घायु पायी और ई. पू. 12 में समाधिमरण द्वारा स्वर्गारोहण किया।

अनेक नाम-आप कुन्दकुन्दाचार्य, वक्रग्रीवाचार्य, एलाचार्य, गृद्धपिच्छाचार्य एवं पद्मनन्दि नाम से विख्यात थे।

कृतित्व-समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, पंचास्तिकाय, वारस अणुपेक्खा, अष्टपाहुड, प्राकृत दशभक्ति। समूचे इतिहास पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि आपने पंचपरमागम एवं 84 पाहुडों की रचना की परन्तु वर्तमान में उपरोक्त कुछ ही कृतियाँ हमें उपलब्ध हो पाती हैं।

2. आचार्य उमास्वामी

आज से लगभग 1800 वर्ष पूर्व ईसा की दूसरी शताब्दी में आचार्य उमास्वामी हुए। इनका विशेष परिचय प्राप्त नहीं होता। आपने 18 वर्ष की अवस्था में मुनिदीक्षा ली। 25 वर्ष बाद आचार्य पद संभाला। आप 40 वर्ष 8 दिन आचार्य पद पर रहे। कुल आयु 84 वर्ष की थी। आचार्य उमास्वामी आचार्य कुन्दकुन्द के शिष्य थे, शिष्य मण्डली में आपके समान प्रतिभा सम्पन्न अन्य शिष्य नहीं था। आप कई ऋद्धियों से सम्पन्न थे। आपके शरीर से स्पर्शित हवा, विष को भी अमृत बना देती थी। आप ऋद्धि के प्रभाव से आकाश में भी चला करते थे।

आचार्य उमास्वामी की मान्यता दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों में है।

आचार्य उमास्वामी उन गौरवशाली आचार्यों में से हैं, जिन्हें समस्त आचार्य परम्परा में पूर्ण प्रामाणिकता व सम्मान प्राप्त है। आपका तत्त्वार्थसूत्र नामक सूत्र ग्रन्थ इतना सुसम्बद्ध और प्रमाणिक सिद्ध हुआ कि भगवान महावीर की द्वादशांग वाणी की ही तरह यह जैनदर्शन का आधार स्तम्भ बन गया है। आचार्य प्रवर उमास्वामी का नाम तत्त्वार्थसूत्र की रचना के कारण अजर-अमर है। यह जैन ग्रन्थों की गीता, बाइबिल, या कुरान है। जिस प्रकार हिन्दू धर्म में गीता, ईसाई धर्म में बाईबिल और इस्लाम धर्म में कुरान को महत्त्व दिया जाता है, उसी प्रकार आचार्य उमास्वामी द्वारा रचित तत्त्वार्थ सूत्र को जैनों में महत्त्व दिया जाता है।

3. आचार्य समन्तभद्र स्वामी

स्वामी समन्तभद्र का जन्म दक्षिण भारत के फणिमण्डल देश के उरगपुर नगर में हुआ था। यह कावेरी नदी के तट पर एक प्रसिद्ध बन्दरगाह था। इसे ही पुरानी त्रिचनापोली कहते हैं। आपके पिता का नाम अज्ञात है। आप कदम्ब राजवंश के एक क्षत्रिय राजकुमार थे। आपका जन्म के समय का नाम शान्तिवर्मा था।

आपने उरगपुर में शिक्षा प्राप्त की थी। आप जिनशासन की सेवा और उसके प्रचार में ही अपना जीवन लगा देना चाहते थे। अपनी बलवती भावनाओं को सफल बनाने के लिये अल्पकाल में ही आपने मुनिदीक्षा ग्रहण की और ज्ञानशक्ति तथा त्याग से जीवन को महान बनाने में निरत हो गये। जैन वाङ्मय में स्वामी समन्तभद्र पूर्ण तेजस्वी विद्वान्, प्रभावशाली दार्शनिक, महावादी विजेता, प्रथम संस्कृत कवि एवं प्रथम स्तुतिकार हुये हैं। धर्म, न्याय, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष, आयुर्वेद,मन्त्र तथा तन्त्र आदि सभी विद्याओं में निपुण थे।

समन्तभद्र आचार्य, आचार्य उमास्वामी के बाद और आचार्य पूज्यपाद स्वामी के पहले विक्रम की दूसरी या तीसरी शताब्दी में हुए हैं।

कृतित्व – आचार्य समन्तभद्र द्वारा निम्न ग्रन्थ विरचित हुए हैं – स्वयंभूस्तोत्र, आप्तमीमांसा (देवागम), युक्त्यनुशासन, स्तुति विद्या, जिनशतक, रत्नकरण्डक श्रावकाचार। इन उपलब्ध ग्रन्थों के अतिरिक्त आपके द्वारा रचित निम्नांकित ग्रन्थों के उल्लेख और मिलते हैं। जीवसिद्धि, तत्त्वानुशासन, प्राकृतव्याकरण, प्रमाण पदार्थ, कर्मप्राकृत टीका और गंधहस्तिमहाभाष्य।

भस्मक व्याधि – समन्तभद्र स्वामी जी को एकबार मणुहकहल्ली ग्राम में भस्मक रोग हो गया था। आपने समता पूर्वक उसे सहा और प्रतिकार भी किया परन्तु शान्ति नहीं मिली। तब आपने गुरु के पास जाकर सल्लेखना ग्रहण करने हेतु याचना की। गुरुदेव ने अपने योगबल से जान लिया कि समन्तभद्र अल्पायु नहीं हैं। इनसे धर्म और शासन की प्रभावना का महान कार्य होना है। तब उन्होंने आदेश दिया कि जिस वेष में, जैसे भी हो सके, रोग शान्ति का उपाय करो। रोग निवृत्ति होने पर प्रायश्चित्त पूर्वक फिर मुनिदीक्षा ले लेना। तब काशी के राजा शिवकोटि के शिवालय में चढ़ने वाली नैवेद्य सामग्री से समन्तभद्र ने अपनी भस्मक व्याधि को शान्त किया था तथा भगवान चन्द्रप्रभ की स्तुति पढ़ते समय जिनबिम्ब प्रकट हुआ था ।

अभ्यास प्रश्न

1. आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी के जन्म स्थान का नाम बताइए। 2. पंच परमागम के नाम बताइए।
3. आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी के पूर्वभव से हमें क्या शिक्षा मिलती है?
4. आचार्य उमास्वामी किन आचार्य के शिष्य थे ?
5. आचार्य उमास्वामी की मान्यता किन दो सम्प्रदायों में है? 6. किस धर्म में किस शास्त्र की प्रधानता है?
7. आचार्य समन्तभद्र स्वामी का जन्म कहाँ हुआ था? 8. आचार्य समन्तभद्र स्वामी को कौन सा रोग हो गया था?
9. समन्तभद्र स्वामी ने कितने ग्रन्थों की रचना की थी?

१ १ १

पाठ-7 हमारे जैन पर्व

अक्षय तृतीया पर्व

प्रतिवर्ष वैशाख शुक्ल तृतीया को अक्षयतृतीया पर्व मनाया जाता है। यह पर्व प्राचीन है क्योंकि प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव मुनि मुद्रा को धारण कर छह माह मौन साधना करने के बाद प्रथम आहारचर्या हेतु निकले। परन्तु आहारदान विधि का प्रचार नहीं होने से उनको 7 माह तक आहार नहीं मिला। एक बार वे आहार के लिए हस्तिनापुर नगर में पधारे। दूर से उन्हें आते देख राजा श्रेयांस को अपने पूर्वजन्म का स्मरण हो गया, तत्पश्चात् उन्होंने विहार करते हुए भगवान ऋषभदेव के सामने आने पर श्रद्धा विनय आदि गुणों से युक्त हो, हे भगवन्! तिष्ठ तिष्ठ यह कहकर पड़गाहनकर उनको चौके में ले गये। उच्चासन पर विराजमान कर उनके चरण कमल धोए, पूजन करके, मन-वचन-काय से नमस्कार किया। तत्पश्चात् इक्षुरस से भरा हुआ कलश उठाकर कहा कि हे प्रभो! यह इक्षुरस सोलह उद्गम दोष, सोलह उत्पादन दोष, दश एषणा दोष तथा धूम, अङ्गार, प्रमाण और संयोजन इन 4 दाता सम्बन्धी दोषों से रहित एवं प्रासुक है, अत: इसे आप ग्रहण कीजिये। अनन्तर भगवान ऋषभदेव ने चारित्र की वृद्धि के लिए पारणा की।

राजा श्रेयांस के गृह महल में तीर्थंकर के आहार होने के प्रभाव से पंचाश्चर्य (1) रत्नवृष्टि (2) पुष्पवृष्टि (3) दुन्दुभि बाजों का बजना (4) शीतल सुगन्धित मन्द-मन्द वायु चलना (5) अहो दानम्-अहो दानम् के प्रशंसा वाक्य प्रकट हुए।

प्रथम आहारचर्या की सूचना पाते ही देवों एवं भरतचक्रवर्ती आदि राजाओं ने भी राजा श्रेयांस का सम्मान किया।

पूर्व घटना का स्मरण कर राजा श्रेयांस ने जो दान रूपी धर्म की विधि बताई, उसे दान का प्रत्यक्ष फल देखने वाले भरतादि राजाओं ने बड़ी श्रद्धा के साथ श्रवण किया। दान सम्बन्धी पुण्य का संग्रह करने के लिए नवधाभक्ति जानने योग्य है। दान देने से जो पुण्य संचय होता है, वह दाता के लिए स्वर्गादि फल देकर अन्त में मोक्षफल देता है।

जिस दिन तीर्थंकर ऋषभदेव का आहार हुआ था उस दिन वैशाख शुक्ला तृतीया थी। उस दिन राजा श्रेयांस के यहाँ रसोईगृह में भोजन अक्षीण (कभी न खत्म होने वाला) हो गया था। अत: आज भी लोग इसे अक्षय तृतीया कहते हैं।

भरतक्षेत्र में इसी दिन से दान देने की प्रथा प्रचलित हुई। यह पर्व जैन समाज की भाँति हिन्दू समाज में भी मनाया जाता है। बुन्देलखण्ड में यह पर्व अख्ती या अक्ती के रूप में प्रसिद्ध है। ये दोनों ही शब्द अक्षयतृतीया के ही अपभ्रंश रूप हैं।

ऐसी मान्यता है कि तीर्थंकर मुनि को प्रथम आहार देने वाला उसी पर्याय से या तीसरी पर्याय से अवश्य मोक्ष प्राप्त करता है। कुछ लोगों की ऐसी मान्यता है कि तीर्थंकर मुनि को आहार दान देकर राजा श्रेयांस ने अक्षयपुण्य प्राप्त किया था। अत: यह तिथि अक्षय तृतीया कहलाती है।

अक्षय तृतीया को लोग इतना शुभ मानते हैं कि इस दिन बिना मुहूर्त लग्न के पुत्र-पुत्रियों के विवाह, नवीन गृह प्रवेश, दुकान का मुहूर्त भी करके गौरव मानते हैं। जैन समाज का विश्वास है कि इस दिन प्रारम्भ किया गया नया कार्य नियमत: सफल होता है।

रक्षाबन्धन पर्व

जैनधर्म के 18वें तीर्थंकर श्री भगवान अरनाथ के तीर्थकाल में मालवा में उज्जयिनी नगरी के राजा श्रीवर्मा श्री अकंपनाचार्य एवं उनके सात सौ शिष्यों के संघ सहित आगमन का समाचार सुनकर उनके दर्शन हेतु अपनी पटरानी श्रीमती व चारों मंत्री बलि, नमुचि, बृहस्पति व प्रह्लाद सहित उपवन में पधारे। आचार्यश्री ने अपने अवधिज्ञान से उन चारों मंत्रियों को मिथ्यात्वी, अभिमानी, द्वेषी जानकर अपने शिष्यों को वाद-विवाद न करने की आज्ञा दी। उस समय जब गुरु ने शिष्यों को आज्ञा दी, तब श्री श्रुतकीर्ति मुनि नगर में आहार को गए थे। उन्होंने यह आज्ञा नहीं सुनी थी। ध्यानारूढ़ सभी मुनियों को नमस्कार करते हुए सम्राट श्री वर्मा मंत्रियों सहित वापस आ रहे थे। संघ के किसी भी मुनि ने आशीर्वाद नहीं दिया। रास्ते में मंत्री बोले-राजन्! ये मुनि तो पत्थर के खंभे के समान हैं। न ये बोलते हैं और न ही इनमें कोई विद्या है। इन्होंने कोई आशीर्वाद भी नहीं दिया। शास्त्रों में कहा है कि "विद्या विहीना: नरा: पशुसमाना:"। ये साधु सब पशु के समान हैं। इस प्रकार मुनियों की हँसी उड़ाते चले आ रहे थे कि रास्ते में ही मुनि श्री श्रुतकीर्ति जो नगर में आहार चर्या को गए थे, वापस आ रहे थे। राजा ने नमस्कार किया। तभी चारों मंत्री बोल उठे- महाराज यह तो तरुण बैल के समान है। इसका पेट तो बैल के समान फूला है। ऐसा कहते ही मुनि से वाद-विवाद करने लगे तथा मुनि से पराजित हो गए। उन मंत्रियों ने अपने राजा के समक्ष अपमानित हुआ जानकर मुनि से बदला लेने की ठान ली। श्री श्रुतकीर्ति मुनि ने अपने गुरु को सारा वृत्तांत सुनाया। गुरु की आज्ञानुसार प्रायश्चित्त लेने हेतु वन में उसी स्थान पर, जहाँ वाद-विवाद हुआ था, ध्यान में लीन हो गए। अपमानित चारों मंत्री बदला लेने की दृष्टि से उसी वन में पहुँचे। वहाँ उन्हीं मुनि को तपस्या में ध्यानस्थ देखकर चारों मंत्रियों ने ज्यों ही एक साथ तलवार मारने के लिए उठाई, त्यों ही वनदेवता ने उसी रूप में कील दिया। प्रात: होते ही राजा को यह समाचार मिला। राजा ने इस कुकृत्य को धिक्कारते हुए कहा कि इन्हें सूली पर चढ़ाया जाना चाहिए। यह सुनकर मुनि ने उन्हें सूली पर चढ़ाने से रोक दिया। तब राजा ने मंत्रियों को दण्डस्वरूप देश निकाला दे दिया।

अपमानित मंत्रीगण भ्रमण करते हुए कुरुजांगल देश के गजपुर (हस्तिनापुर) में राजा पद्मराय के यहाँ पुन: मंत्री पद पर स्थापित हो गए। एक दिन राजा ने मंत्री को बताया कि कुंभपुर नगर का राजा सिंहल, जो मुझे नमस्कार नहीं करता, मैं उसे जीत नहीं सका हूँ। तब मंत्रियों ने अपने छलकपट से राजा सिंहल को बंदी बनाकर राजा पद्मराय को सौंप दिया। राजा पद्मराय मंत्री बलि पर बहुत प्रसन्न हुए और बलि से बोले- जो वरदान माँगोगे दूँगा। मंत्री बलि ने अपना वरदान भंडार में जमा रहने दिया और कहा कि आवश्यकता पड़ने पर ले लूँगा।

एक समय मुनि श्री अकम्पनाचार्य अपने शिष्यों सहित हस्तिनापुर के उपवन में पधारे। समाचार सुनकर मंत्रियों के मन में बदला लेने की भावना उठी। उन्होंने राजा को अपने वचन का स्मरण दिलाकर सात दिन का राज्य माँगा और स्वयं राजा बन गए। राजा पद्मराय अन्त:पुर में चले गये और राजा बलि ने अकम्पनाचार्य सहित 700 मुनियों पर घोर उपसर्ग करना प्रारम्भ कर दिया। उपवन में चारों ओर बाड़ी लगाकर अग्नि जलाकर पशुओं के चर्म, मांस, हड्डियों को होमने लगा।

दुर्गन्धित वायु से, ध्यानस्थ मुनियों के नाक, गला रुंधने लगे तथा शरीर झुलसने लगा। उपसर्ग जानकर मुनियों ने समाधि धारण कर ली। उस समय मिथिलापुर में ध्यानस्थ मुनि श्री सागरचन्द तप कर रहे थे। उन्होंने अपने अवधिज्ञान से जाना कि श्रवण नक्षत्र में तारा कम्पायमान हो रहा है, मतलब मुनियों पर घोर उपसर्ग हो रहा है। तब उन्होंने अपने निकट बैठे क्षुल्लक श्री पुष्पदंत को धरणीभूषण पर्वत पर ध्यानस्थ मुनिश्री विष्णुकुमार के पास रक्षा के लिए भेजा। श्री विष्णुकुमार मुनि को विक्रिया ऋद्धि उत्पन्न हुई थी।

यह समाचार सुनकर श्री विष्णुकुमार मुनि ने अपनी विक्रिया ऋद्धि के बल पर बटुक ब्रह्मचारी का रूप धारण किया और भिक्षा हेतु राजा बलि के दरबार में पहुँचे। बटुक ब्रह्मचारी को देखकर राजा उपहासपूर्वक बोला-जो माँगना हो माँग लो। बटुक ब्रह्मचारी ने 3 पग पृथ्वी माँगी। राजा बलि हँसा और बोला मुझे मालूम था कि आपके शरीर की तरह आपकी बुद्धि भी बौनी होगी। तथास्तु कहने के बाद जैसे ही विष्णुकुमार ने अपना पहला पग बढ़ाया तो सुमेरु पर्वत पर गया और दूसरा मानुषोत्तर पर्वत पर, अब ब्रह्मांड में जमीन शेष नहीं रही। तब बलि से कहा कि 1 पग जमीन और चाहिए। तब राजा बलि बोला कि मेरी पीठ पर अपना तीसरा पग रखिए। तीसरा पैर उसकी पीठ पर रखा तो उसका अभिमान चूर-चूर हो गया। मुनि ने अपना रूप प्रकट किया तथा समस्त मुनिसंघ को उपसर्ग दूर कर बंधन मुक्त किया तथा राजा पद्मराय को राज्य दिलाया। राजा बलि को इस दुष्कृत्य का दंड देना चाहिए, यह समाचार सुन आचार्यश्री ने कहा कि हे राजन् इन्हें क्षमा करो क्योंकि दया धर्म का मूल है। चारों मंत्रियो ने जैनधर्म स्वीकार किया और आचार्यश्री से श्रावक के व्रत स्वीकार किये।

श्री विष्णुकुमार मुनि ने अपने गुरु के पास जाकर अपने दोषों की आलोचना की और धरणीभूषण पर्वत पर कठोर तप करते हुए ध्यानस्थ हो गए। वह दिन श्रवण नक्षत्र श्रावण माह की पूर्णिमा का था। जिस दिन 701 मुनियों की रक्षा विष्णुकुमार मुनि द्वारा हुई थी। विघ्न दूर होते ही प्रजा ने खुशियाँ मनाईं और मुनिसंघ को स्वास्थ्य के अनुकूल आहार दिया तथा वैयावृत्ति की।

रक्षाबंधन का पर्व प्रेम का, स्नेह का और परम्परा की रक्षा का पर्व है। कलाई पर कच्चे धागे बांधने और बंधवाने के साथ-साथ यदि मन भी वात्सल्य, करुणा और प्रेम के धागों से बंधता है तो निश्चित ही हम सबका रक्षाबंधन पर्व मनाना सार्थक होगा। सामाजिक परम्परा में भी इस पर्व का बड़ा महत्त्व है। बहिन भाई की कलाई पर राखी बांधती है तथा स्नेह और रक्षा का दान मांगती है तो भाई भी बहिन के उस रक्षासूत्र को स्वीकार कर रक्षा की प्रतिज्ञा का संकल्प लेता है। युगों-युगों से इस परम्परा का निर्वाह आज तक होता आ रहा है।

दीपावली पर्व

सम्पूर्ण भारत में प्रत्येक सम्प्रदाय के व्यक्ति दीपावली पर्व को अपने-अपने तरीके व उत्साह से मनाते हैं। वहीं हमारे जैनधर्म में दीपावली पर्व मनाने का एक पवित्र कारण है कि दीपावली के दिन अर्थात् कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी को रात्रि के अन्तिम पहर में और अमावस्या के प्रातःकाल के समय अंतिम तीर्थंकर वर्द्धमान स्वामी को निर्वाण प्राप्त हुआ था। इस कारण दीपावली पर्व को वीर निर्वाण महोत्सव के रूप में मनाया जाता है। वहीं सायंकाल के समय गौतम गणधर स्वामी को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई थी।

भगवान महावीर के निर्वाण महोत्सव के बाद सुर और असुरों के द्वारा जलायी हुई बहुत भारी दैदीप्यमान दीपकों की पंक्ति से पावानगरी का आकाश सब ओर से जगमगा उठा था। उस समय से लेकर भगवान के निर्वाण कल्याणक की भक्ति से युक्त संसार के प्राणी इस भरत क्षेत्र में प्रतिवर्ष आदर पूर्वक प्रसिद्ध दीपमालिका के द्वारा भगवान् महावीर की पूजा करने के लिये उद्यत रहने लगे और उन्हीं की स्मृतियों में दीपावली का उत्सव मनाने लगे। तब से आज तक सभी वर्गों के लोग उत्साह पूर्वक दीपावली पर्व मनाते चले आ रहे हैं।

दीपावली के दिन समवशरण का चित्र बनाकर केवलज्ञान रूपी लक्ष्मी एवं गौतमगणधर की पूजन की जाती थी, परन्तु बाद में उस अचल लक्ष्मी को छोड़कर लोग धन रूपी तुच्छ लक्ष्मी को पूजने लगे।

दीपावली पर्व सफाई और स्वच्छता का प्रतीक भी है। कुछ विद्वानों का विचार है कि वर्षा ऋतु के बीतने के बाद पृथ्वी में नमी रहती है। जो मार्ग एवं मकान विकृत हो जाते हैं, उनको व्यवस्थित करने के लिये दीपावली के पूर्व ही अपने मकान-दुकान और कारखानों की सफाई कर लिया करते हैं। कहते भी हैं कि सफाई-स्वच्छता और सुन्दरता में लक्ष्मी का वास होता है तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी इस बात को प्रतिपादित करता है कि चूने की पुताई करने से एवं सरसों का तेल जलाने से मकानों के रोगयुक्त मच्छर-मक्खी, कीड़े-मकोड़े आदि कीटाणु समाप्त हो जाते हैं। दुर्गन्ध भी दूर होती है। अत: रोगनाशक पर्व के रूप में भी दीपावली पर्व प्रचलित है। आध्यात्मिक दृष्टि के अनुसार दीपावली के दिन अपने हृदय से राग-द्वेष-मोह-ईर्ष्या रूप मल को त्यागकर ज्ञानरूपी धन को जागृत करना चाहिए क्योंकि धनलक्ष्मी का तो आय-व्यय होता ही रहता है परन्तु ज्ञान लक्ष्मी सदैव स्थिर स्वभाव वाली है, जो हमें ऐश्वर्य-सम्मान दोनों ही दिलाती है।

प्रतिवर्ष सम्पूर्ण भारत में लाखों करोड़ों रुपये व्यर्थ में व्यय करके, अन्य मत के लोग जुआ खेलके,आतिशबाजी करके, क्लबों में जाकर शराब पीकर, ऐसे निन्दनीय कृत्यों से दीपावली पर्व मनाते हैं। हमें चाहिए कि हम दीपावली को बहुत ही सात्त्विक एवं उत्साह के साथ मनायें।

दीपावली के दिन प्रातः शीघ्र स्नान करके,शुद्ध वस्त्र पहनकर, जिनमंदिर में जाकर, जिनेन्द्राभिषेक, महावीरपूजन आदि कर निर्वाण लाडू चढ़ाना चाहिए। निर्वाणलाडू छत्राकार सिद्धशिला का प्रतीक है,जहाँ भगवान मोक्षावस्था में अवस्थित हैं। ऐसा आचार्यों का कथन है। दोपहर में पंचपरमेष्ठी विधान आदि का आयोजन एवं सायंकाल जिनेन्द्र सामूहिक आरती व पाठ के बाद, भगवान महावीर और उनके सिद्धान्तों पर विशेष सभा का आयोजन होना चाहिए। परन्तु हमें विशेष ध्यान रखना चाहिए कि दीपावली के दिन हिंसाकारक जैसे-आतिशबाजी, जुआ खेलना आदि घृणित कार्य नहीं करना चाहिए। तभी हमारा दीपावली पर्व मनाना सार्थक होगा। तभी हम महावीर के अनुयायी और उनकी सन्तान कहलायेंगे।

इतना अवश्य करायें-

1. फटाखे न फोड़ने का संकल्प दिलायें। 2. जुआ न खेलने का संकल्प दिलायें ।
3. धन लक्ष्मी की पूजा न कर भगवान महावीर और जिनवाणी की पूजा करने का नियम दिलायें।
4. शिष्टाचार, अहिंसक आहार एवं सभ्यता का अमर दीपक जीवन रूपी घर में सदा जलाने का संकल्प करायें।

अभ्यास प्रश्न

1. जैनधर्म के अनुसार दीपावली पर्व क्यों मनाया जाता है? 2. दीपावली पर्व हमें किस प्रकार मनाना चाहिए?
3. लक्ष्मी कितने प्रकार की होती है? और कौन सी श्रेष्ठ है? 4. दीपावली पर्व किस तिथि को मनाया जाता है?

1. वैशाख शुक्ल तृतीया को किस पर्व के रूप मे मनाया जाता है?
2. मुनि आदिनाथ को सर्वप्रथम किसने आहार दिया था? 3. दानादि का प्रचलन कब से प्रारम्भ हुआ था?
4. मुनि आदिनाथ को दिया गया इक्षुरस कितने दोषों से रहित था? 5. अक्षय तृतीया से आप क्या समझते हैं?
6. पंच आश्चर्य कौन-कौन से हैं? 7. मुनि अवस्था में तीर्थंकर को आहार देने वाला कितने भव में मोक्ष चला जाता है?

1. 701 मुनियों पर उपसर्ग किन तीर्थंकर के तीर्थ में हुआ ? 2. उज्जयिनी के राजा का एवं उनके मंत्रियों का क्या नाम था?
3. हस्तिनापुर का राजा मंत्रियों के किस कार्य से प्रसन्न हुआ ?
4. विष्णुकुमार मुनि ने 701 मुनियों की रक्षा के लिये क्या किया?
5. रक्षाबंधन की कहानी से हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिए?

पाठ-8 अष्ट मूलगुण

जो गुणों में मूल हैं, उन्हें मूलगुण कहते हैं या मुख्य नियम मूलगुण कहलाते हैं। जैसे मूल (जड़) के बिना वृक्ष नहीं हो सकता है, वैसे ही इन आठ मूलगुणों के बिना श्रावक नहीं कहला सकता है और आत्मसाधना के लिए प्रथमत: श्रावक होना अनिवार्य है।

श्रावक के मूलगुण निम्न हैं-

1. मद्य (शराब) त्याग	2. मांस भक्षण त्याग	3. मधु (शहद) त्याग
4. पंच उदुम्बर फलों का त्याग	5. रात्रिभोजन त्याग	6. जल छानकर पीना
7. नित्य देवदर्शन करना	8. जीवों पर दया करना।	

1. मद्य त्याग-शराब आदि मादक वस्तुओं के सेवन करने का त्याग करना मद्य त्याग है। शराब पदार्थों को सड़ा गलाकर बनायी जाती है, अत: इसके सेवन से लाखों जीवों का घात होता है। इसके सेवन से व्यक्ति का विवेक समाप्त हो जाता है और वह पागल सा हो जाता है, अत: इसका त्याग करना अति आवश्यक है। जैसे- शराब, बीयर, ब्रांडी, वाइन आदि पीने का त्याग।

2. मांस भक्षण त्याग-मांस की उत्पत्ति त्रस जीवों के घात से होती है तथा मांस में निरन्तर त्रस जीवों की उत्पत्ति भी होती रहती है, अत: मांस खाने वाला असंख्यात त्रस जीवों का घात करता है। उसके परिणाम क्रूर हो जाते हैं, वह कई प्रकार की बीमारियों से ग्रस्त हो जाता है, अत: श्रावक को मांस का सेवन कदापि नहीं करना चाहिए। अण्डा भी त्रस जीवों का शरीर है, अत: उसे भी नहीं खाना चाहिए। विदेशी टाफियां, चीज, बाजार की केक, आइसक्रीम, भूरे निशान वाली खाद्य वस्तुयें नहीं खानी चाहिए।

3. मधु (शहद) त्याग-मधु असंख्य जीवों के घात से उत्पन्न होता है। यह मधु-मक्खियों का उगाल है तथा अपवित्र पदार्थ है, इसकी एक बूंद मात्र भी खाने से सात गाँव जलाने के बराबर पाप लगता है। अत: इसे कदापि नहीं खाना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि बाजार का शुद्ध शहद खाया जा सकता है परन्तु वह गलत है। यह मधु मक्खी का वमन होने से अभक्ष्य ही है।

4. पंच उदुम्बर फलों का त्याग-बड़, पीपल, ऊमर ,कठूमर, पाकर, इन पाँच फलों को उदुम्बर फल कहते हैं। इनके मध्य में अनेक सूक्ष्म-स्थूल त्रस जीव पाये जाते हैं, जिनके खाने से अगणित त्रस जीवों का घात होता है। अत: इन सब का त्याग आवश्यक है।

5. रात्रिभोजन त्याग-सूर्य अस्त होते ही अनेक त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं। रात्रि में भोजन करने पर भोजन के साथ अनेक जीवों का भक्षण हो जाता है, इसलिए प्रथमत: जीव हिंसा होती है। दूसरा मांसभक्षण हो जाने का दोष लगता है। रात्रि में भोजन के साथ मकड़ी आदि मिल जाने से कोढ़ एवं जुएँ आदि मिल जाने से जलोदर जैसे भयंकर रोग होना भी सम्भव है। रात्रि में भोजन करके सो जाने पर पाचन क्रिया खराब हो जाती है, जिससे कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। रात्रि में भोजन करते समय सूर्य की अल्ट्रावायलेट किरणों का अभाव रहता है और हमें पूर्ण रूप से विटामिन डी नहीं मिल पाता है। अत: भोजन दिन में ही करना चाहिए।

6. जल छानकर पीना-पानी की एक बूँद में असंख्यात जीव होते हैं, ऐसा जैनाचार्यों ने बताया है। बिना छने पानी से उन जीवों का घात होता है और स्वास्थ्य भी बिगड़ता है। वैज्ञानिकों ने भी बिना छने पानी की एक बूंद में 36450 जीव बताये हैं। इसलिए सदा ही पानी छानकर पीना चाहिए।

मोटे कपड़े का दोहरा छन्ना होना चाहिए (जिससे सूर्य की रोशनी न दिखे)। छना हुआ पानी 48 मिनिट तक त्रस जीव रहित रहता है तदुपरांत उसमें त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं अत: उसे फिर से छानना चाहिए। छने हुए पानी में लौंग, इलायची आदि का पाउडर डाल देने से पानी की मर्यादा 6 घण्टे की हो जाती है। कुनकुने (कम गरम) पानी की मर्यादा भी 12 घण्टे की हो जाती है। उबाल कर गर्म किए हुए जल की मर्यादा 24 घण्टे तक की होती है।

7. नित्य देवदर्शन करना-देवदर्शन करने से हमारे भाव/विचार अच्छे बनते हैं तथा पाप कर्म नष्ट होकर सुख शांति प्राप्त होती है। मंदिर में आत्मा की चर्चा होती है, धर्म ज्ञान की वृद्धि होती है, जिनेन्द्र भगवान के दर्शन की तरह यदि हम अपनी आत्मा के दर्शन करें तो हम भी भगवान बन सकते हैं।

8. जीवों पर दया करना-किसी प्राणी को मन-वचन-काय से कष्ट नहीं देना चाहिए एवं यदि किसी को कोई कष्ट हो तो उसे दूर करने को दया कहते हैं। अत: सभी जीवों के लिए हमें हमेशा मंगल भावना करनी चाहिए। नित्य देवदर्शन करना, रात्रिभोजन का त्याग करना तथा जल छानकर पीना, ये तीनों जैनकुलाचार भी कहलाते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1. मूलगुण किसे कहते हैं? कितने होते हैं? नाम बताइए।
2. उदुम्बर फल कितने और कौन-कौन से हैं?
3. बिना छने जल में वैज्ञानिकों ने कितने जीव बताए हैं?
4. रात्रि में भोजन करने से क्या हानियाँ हैं?

आवश्यक कार्य-सभी छात्रों को इन अष्ट मूलगुणों को धारण का नियम कराना चाहिए।

पाठ- 9 चतुर्विध संघ

1. मुनि

जो समस्त परिग्रहों से रहित होते हैं ,नग्न दिगम्बर होते हैं ,दिन में एक बार खड़े होकर अपने हाथों में शुद्ध आहार लेते हैं, 28 मूलगुणों का पालन करते हैं ,पीछी कमण्डलु रखते हैं तथा केशलोंच करते हैं, उन्हें मुनि कहते हैं।

2. आर्यिका

जो पीछी कमण्डलु रखती हैं, सिर्फ एक साड़ी पहनती हैं ,मुनियों की तरह महाव्रतों का पालन एवं केशलोंच करती हैं ,दिन में एक बार बैठकर हाथ में आहार लेती हैं, उन्हें आर्यिका कहते हैं। इनको वंदामि कहकर नमस्कार करना चाहिए।

3. (अ) ऐलक

जो केवल एक लंगोट मात्र पहनते हैं ,पीछी कमण्डलु रखते हैं ,केशलोंच करते हैं तथा बैठकर हाथ में आहार ग्रहण करते हैं ,ग्यारह प्रतिमाओं का पालन करते हैं। इनको नमस्कार करते समय इच्छामि बोलना चाहिए।

(ब) क्षुल्लक

जो पीछी कमण्डलु रखते हैं, केवल एक लंगोट तथा छोटा दुपट्टा रखते हैं ,बैठकर कटोरे में या हाथ में आहार करते हैं, केशलोंच करते हैं या कैंची से भी बाल बना सकते हैं ,श्रावक की ग्यारह प्रतिमाओं का पालन करते हैं। इनको नमस्कार करते समय इच्छामि कहना चाहिए।

4. क्षुल्लिका

जो क्षुल्लक की तरह सभी क्रियायें करती हैं ,एक साड़ी और एक चद्दर रखती हैं, इनको नमस्कार करते समय इच्छामि कहना चाहिए।

विशेष :- अन्य प्रतिमाधारी श्रावक व श्राविका को वंदना एवं साधर्मी भाई-बहिनों से जयजिनेन्द्र कहना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

1. मुनि किसे कहते हैं?
2. ऐलक और क्षुल्लक में अंतर बताइए?
3. साधर्मी जनों को क्या कहकर विनय करना चाहिए?
4. क्षुल्लक एवं क्षुल्लिका किसे कहते हैं?

ववव

पाठ-10 हमारे दैनिक कर्तव्य

1. सूर्य उदय से पहले उठना चाहिये।
2. सुबह उठते ही णमोकार मंत्र बोलना चाहिए।
3. सुबह माता-पिता एवं बड़ों के चरणस्पर्श एवं सभी से जयजिनेन्द्र बोलना चाहिए।
4. प्रतिदिन मंदिर जी में भगवान् के दर्शन एवं स्वाध्याय करना चाहिए।
5. प्रतिदिन मंदिर जी की गोलक में कुछ पैसे अवश्य डालने चाहिए।
6. भोजन करने से पहले णमोकार मंत्र बोलना चाहिए।
7. भोजन करने के बाद 9 बार णमोकार मंत्र बोलना चाहिए।
8. टी.वी. नहीं देखना चाहिए यदि देखें तो एक घंटे से ज्यादा नहीं ।
9. किसी को अपशब्द नहीं बोलना चाहिए।
10. बड़ों से जी लगाकर के ही बोलना चाहिए।
11. सबसे प्रसन्न मुद्रा में शिष्टाचारपूर्वक बोलना चाहिए।
12. भाई-बहिनों से या अन्य किसी से झगड़ना नहीं चाहिए।
13. सूर्यास्त होने से पहले भोजन कर लेना चाहिए। उसके बाद अन्न की वस्तु नहीं खाना चाहिए।
14. रात्रि में सोने से पहले दादा-दादी एवं माता-पिता की सेवा करके, आशीर्वाद प्राप्त करके सोना चाहिए।
15. सोने से पहले 9 बार णमोकार मंत्र पढ़ना चाहिए।
16. घर में आये मेहमानों के चरण-स्पर्श करके जयजिनेन्द्र बोलना चाहिए एवं उनसे मीठी-मीठी बातें करना चाहिए।
17. माता-पिता की आज्ञा मानना चाहिए।

ववव

पाठ-11 जिनवाणी स्तुति

धन्य-धन्य वीतराग वाणी, अमर तेरी जग में कहानी।
चिदानंद की राजधानी, अमर तेरी जग में कहानी ॥टेक॥

उत्पाद-व्यय अरु ध्रौव्य स्वरूप, वस्तु बखानी सर्वज्ञ भूप।
स्याद्वाद तेरी निशानी, अमर तेरी जग में कहानी ॥1॥

नित्य अनित्य अरु एक-अनेक, वस्तु कथंचित् भेद-अभेद।
अनेकान्तरूपा बखानी, अमर तेरी जग में कहानी ॥2॥

भाव शुभाशुभ बंधस्वरूप, शुद्ध चिदानन्दमय मुक्तिरूप।
मारग दिखाती है वाणी, अमर तेरी जग में कहानी ॥3॥

चिदानन्द चैतन्य आनन्द धाम, ज्ञान स्वभावी निजातम राम।
स्वाश्रय से मुक्ति बखानी, अमर तेरी जग में कहानी ॥4॥

U U U

माता तु दया करके, कर्मो से छुड़ा देना।
इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना।।
माता तु दया ....

जीवन के चौराहे पर, मैं सोच रहा कबसे
जाऊँ तो किधर जाऊँ, यह पूछ रहा मन से
पथ भूल गया हूँ मैं, तुम राह बता देना
इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना।।
माता तु दया ....

जीवन नईया मेरी, डगमग डगमग डोले
तुम खेवटिया मेरे, प्रभु जी पार करो मेरी
भवोदधी में अटका हूँ, प्रभु पार लगा देना
इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना।।
माता तु दया ....

लाखों को उवारा है, मुझको भी उवारों तुम
मझधार में है नईया, उसे पार लगा दो तुम
मझधार में अटका हूँ, भव पार लगा देना
इतनी सी विनय तुमसे, चरणों में जगह देना।।
माता तु दया ....

हमारी पाठशाला है

हमें आचरण सिखलाती ---------- हमारी पाठशाला है।
हमें व्यवहार सिखलाती ---------- हमारी पाठशाला है।
हमें मंदिर बुलाती ---------- हमारी पाठशाला है।
प्रभु दर्शन दिलाती ---------- हमारी पाठशाला है।
छना पानी सदा पीना ---------- सिखाती पाठशाला है।
कभी ना रात को खाना ---------- सिखाती पाठशाला है।
प्याज, आलू नहीं खाना ---------- सिखाती पाठशाला है।
ना होटल में कभी जाना ---------- सिखाती पाठशाला है।
सदा आदर विनय करना ---------- सिखाती पाठशाला है।
चरण छूकर नमन करना ---------- सिखाती पाठशाला है।
पिता-माता की सेवा करना ---------- सिखाती पाठशाला है।
कभी आपस में ना लड़ना ---------- सिखाती पाठशाला है।
कभी अभिमान ना करना ---------- सिखाती पाठशाला है।
सदा पापों से तुम डरना ---------- सिखाती पाठशाला है।
बुरी आदत ना तुम लाना ---------- सिखाती पाठशाला है।
मिले अच्छाई तो पाना ---------- सिखाती पाठशाला है।
धर्म पालो सदा अपना ---------- सिखाती पाठशाला है।
हमें णमोकार है जपना ---------- सिखाती पाठशाला है।
चलें सद्मार्ग पर कैसे ---------- सिखाती पाठशाला है।
सही जैनी बनें कैसे ---------- सिखाती पाठशाला है।
सदाचारी सदा बनना ---------- सिखाती पाठशाला है।
कभी निन्दा नहीं करना ---------- सिखाती पाठशाला है।
कभी चुगली नहीं करना ---------- सिखाती पाठशाला है।
जिनवाणी को नित पढ़ना ---------- सिखाती पाठशाला है।
गीत आतम के तुम गाना ---------- सिखाती पाठशाला है।
कभी हिंसा नहीं करना ---------- पाठ पढ़ना यहाँ आकर।
कभी ना झूठ तुम कहना ---------- पाठ पढ़ना यहाँ आकर।
ना चोरी तुम कभी करना ---------- पाठ पढ़ना यहाँ आकर।
बुरी दृष्टि ना तुम रखना ---------- पाठ पढ़ना यहाँ आकर।
ना आसक्ति अधिक रखना ---------- पाठ पढ़ना यहाँ आकर।
देवपूजा सदा करना ---------- बताती पाठशाला है।
गुरु सेवा में नित रहना ---------- बताती पाठशाला है।
करो स्वाध्याय नित ही तुम ---------- बताती पाठशाला है।
रहें संयम से जीवन में ---------- बताती पाठशाला है।
करें तप हो सुखी जीवन ---------- बताती पाठशाला है।
करें हम दान नित-प्रतिदिन ---------- बताती पाठशाला है।
जहाँ सद्ज्ञान है मिलता ---------- हमारी पाठशाला है।
जहाँ सम्मान है मिलता ---------- हमारी पाठशाला है।
सभी को लगती है प्यारी ---------- हमारी पाठशाला है।
कभी ना भूलना इसको ---------- ये प्यारी पाठशाला है।
बड़े उपकार हैं इसके ---------- ये प्यारी पाठशाला है।

हमारी पाठशाला है, हमारी पाठशाला है।

संस्थान द्वारा संचालित प्रमुख गतिविधियाँ

❑ **महाकवि आचार्य ज्ञानसागर छात्रावास** - जिसमें अंग्रेजी सहित कक्षा दशवीं के उत्तीर्ण छात्रों को प्रवेश देकर उन्हें धार्मिक एवं नैतिक संस्कारों से सुशोभित करते हुये जैनदर्शन एवं इच्छुक छात्रों को कम्प्यूटर शिक्षा, वास्तुशिल्प विज्ञान, ज्योतिष के अध्ययन के साथ ही संस्कृत, अंग्रेजी भाषा की प्रवीणता के लिये प्रशिक्षित शिक्षकों की व्यवस्था एवं प्रतियोगी परीक्षाओं के लिये विशेष दिशा निर्देश की भी सुविधा उपलब्ध है। धार्मिक अध्ययन सहित कुल पाँच वर्ष के पाठ्यक्रम में दोवर्षीय उपाध्याय परीक्षा (सीनियर हायर सैकण्डरी के समकक्ष) माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर से, तीनवर्षीय शास्त्री परीक्षा (बी. ए. के समकक्ष) राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध है। जो सरकार द्वारा आई. ए. एस. और आर.ए.एस. जैसी किसी भी सर्वमान्य प्रतियोगी परीक्षाओं में सम्मिलित होने के लिये मान्य है।

❑ **आचार्य ज्ञानसागर ग्रन्थमाला** - श्रेष्ठ आगम ग्रन्थ तथा अन्य शोध पूर्ण कृतियों को प्रकाशित कर उन्हें अर्द्ध मूल्य में स्वाध्याय हेतु उपलब्ध कराना।

❑ **भारतवर्षीय श्रमण संस्कृति परीक्षाबोर्ड** -इसकी स्थापना का मुख्य उद्देश्य श्री दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति संस्थान,सांगानेर द्वारा पंजीकृत पाठशालाओं एवं विभिन्न धार्मिक व लौकिक शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन करने वाले छात्र-छात्राओं, प्रौढ़वर्ग (महिला-पुरुष) के लिये धार्मिक परीक्षा आयोजित करना और उन्हें उपाधियाँ प्रदान करना एवं आर्षमार्गीय सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार करना है।

❑ **धार्मिक शिक्षण शिविर**-जैन संस्कृति के संरक्षण, सम्वर्द्धन तथा धार्मिक ग्रन्थों एवं सिद्धान्तों की जानकारी के लिये बालक, युवाओं एवं प्रौढ़ श्रावकों को धर्म में सम्यक् श्रद्धा जागृत करने हेतु आध्यात्मिक शिक्षण एवं प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन करना।

❑ **प्रवचन व्यवस्था**- दशलक्षणपर्व, अष्टाह्निका पर्व एवं अन्य धार्मिक पर्वों पर देश-विदेश के लिये विद्वानों की व्यवस्था करना।

❑ **अनुष्ठान व्यवस्था**-पंचकल्याणक, वेदीप्रतिष्ठा, वेदीशिलान्यास एवं समस्त विधि विधानों एवं धार्मिक आयोजनों के लिये श्रेष्ठ प्रतिष्ठाचार्यों एवं विद्वानों की व्यवस्था करना।